चन्दामामा
जनवरी १९६१
50

Photo by V. R. Ramani, B. A.

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

क्या पढ़ूँ? पढ़ा न जाए!

प्रेषक:
विजयकुमार - राँची

भव्य उद्घाटन 23 दिसम्बर को
भारत के सभी प्रमुख नगरों में
घूँघट
जैमिनी चित्र
निर्माता-दिग्दर्शक
रामानन्द सागर
संगीत
रवि
गीतें
शकील
बदायुनी
रुपहले परदे पर अभूतपूर्व मनमोहक कथा

जनवरी १९६१

विषय - सूची

★

एक प्रति ५० नये पैसे वार्षिक चन्दा रु. ६–००

ज़रा खाकर तो देखिये! आपको मजा आ जायेगा!!

यह साठे मिल्क चॉकलेट विश्व की सर्वोत्तम कोकोबीन, दूध और गन्ने की शक्कर के संमिश्रण से निर्मित है, जो सुमधुर स्वाद से भरपूर है। यह शीघ्र ही मुंह में घुल जाता है तथा आपको अतिरिक्त पौष्टिक है।

SATHES MILK CHOCOLATE

SATHES Super Blend CHOCOLATE

साठे चॉकलेट्स

साठे बिस्कुट एण्ड चॉकलेट कं. लि., पूना-२

विदेशों में भी लोकप्रिय

भारतीय हाथकरघा-वस्त्रों ने अब अफ्रीका, पूर्वी एशिया व अरब के देशों तथा कई अन्य जगहों में भी काफी लोकप्रियता प्राप्त कर ली है। इनका निर्यात पिछले साल ६६० लाख रुपये से भी अधिक का हुआ।

हाथकरघे से बनी चीजों की मांग अधिकाधिक बढ़ती जा रही है क्योंकि वे बहुत उत्तम किस्म की होती हैं। इस का श्रेय निरीक्षण और उत्तम किस्म की मुहर लगाने वाली व्यवस्था को है। इस बढ़ती हुई मांग को पूरा करने के लिए हाल ही में अदन, कोलम्बो, बैंकोक, कुआलालम्पुर और सिंगापुर में हैण्डलूम इम्पोरियम खोले गये हैं।

हाथकरघे

भारतीय अर्थ-व्यवस्था के महत्वपूर्ण अंग

डीए ६०/३४७

हम प्रत्येक व्यक्ति और व्यापारिक संस्था को आश्वासन देना चाहते हैं कि कलात्मक सृजन, स्पष्टतम कार्य-निपुणता, आकर्षक मुद्रण और शीघ्र वितरण हमारा ध्येय है।
*
हिन्दी, अंग्रेजी, तेलुगु, तमिल, कन्नड़, मराठी, गुजराती, मलयालम और उड़िया में छपाई का कार्य लिया जाता है।
*
दि बी. एन. के. प्रेस
(प्राइवेट) लिमिटेड
चन्दामामा बिल्डिंग्स :: मद्रास-२६
टेलिफ़ोन :
८८८५१-४ लाइन्स

अब

अपना
मनचाहा स्वास्थ्यवर्धक
वाटरबरीज़ कम्पाउन्ड

विटामिन युक्त

लीजिए

अब आप भारत का मनचाहा और स्वास्थ्यप्रद टॉनिक विटामिनयुक्त खरीद सकते हैं। वाटरबरीज़ कम्पाउण्ड के प्रसिद्ध फ़ार्मूले में स्फूर्तिदायक बहुमूल्य विटामिनों का समावेश किया गया है। यह बीमारी के बाद की कमज़ोरी को दूर कर शरीर में नयी ताकत और स्फूर्ति पैदा करता है। खून साफ़ करना, स्नायुओं और ज्ञानतन्तुओं में नया जीवन लाना और शरीर में बीमारी को रोकने की अद्भुत शक्ति पैदा करना यह सब वाटरबरीज़ विटामिन कम्पाउण्ड के विशेष गुण हैं।

वाटरबरीज़
विटामिन
कम्पाउन्ड

आपकी खुराक का पूरक।

लाल लेबलवाला क्रियोसोट तथा ग्वायकोलयुक्त वाटरबरीज़ कम्पाउण्ड हर जगह मिलता है जो सर्दी और खाँसी के लिए बेजोड़ है।

सूचना

एजेण्टों और ग्राहकों से निवेदन है कि मनीआर्डर कूपनों पर पैसे भेजने का उद्देश्य तथा आवश्यक अंकों की संख्या और भाषा संबंधी आदेश अवश्य दें। पता – डाकखाना, ज़िला, आदि साफ़ साफ़ लिखें। ऐसा करने से आप की प्रतियाँ मार्ग में खोने से बचेंगी।

—सर्क्युलेशन मैनेजर

*

ग्राहकों को एक जरूरी सूचना !

ग्राहकों को पत्र-व्यवहार में अपनी ग्राहक-संख्या का उल्लेख अवश्य करना चाहिये। जिन पत्रों में ग्राहक-संख्या का उल्लेख न होगा, उन पर कोई ध्यान नहीं दिया जा सकेगा। पता बदल जाने पर तुरन्त नए पते की सूचना देनी चाहिए। यदि प्रति न मिले तो १० वीं तारीख से पहले ही सूचित कर देना चाहिए। बाद में आनेवाली शिकायतों पर कोई ध्यान नहीं दिया जाएगा।

व्यवस्थापक, "चन्दामामा"

जे. वी. मंघारामके

एनर्जी फूड

बिस्कुट

बच्चों को पैडल-चालित छोटी मोटरगाडी चलानेमें बहुत मजा आता है। वैसाही मजा जे. बी. एनर्जी फूड बिस्कुट खानेमें उन्हें आता है, जो जोश, उत्साह और स्फूर्तिवर्धक है।

सुखी परिवार के लिए पौष्टिक बिस्कुट

जे. वी. मंघाराम एण्ड कं.

ग्वालियर तथा हैदराबाद

कोलगेट से दन्त-क्षय को रोकिये

और साथ ही दिनभर दुर्गंधमय श्वास से मुक्त रहिये !

क्योंकि : एक ही बार ब्रश करने से—
कोलगेट डेन्टल क्रीम ८५% तक
दन्त-क्षयकारी और दुर्गंध-प्रेरक जीवाणु
ख़त्म करती है।

वैज्ञानिक परीक्षणों से सिद्ध हो गया है कि भोजन के तुरंत बाद ब्रश करने की कोलगेट विधि ने दन्त-चिकित्सा के समस्त इतिहास में पहले के किसी भी समय के मुकाबले में अधिक व्यक्तियों के लिए अधिक दन्त-क्षय को रोका है। कोलगेट १० में से ७ उदाहरणों में मुंह में पैदा होनेवाली दुर्गंधमय श्वासको तत्काल ख़त्म कर देता है। सिर्फ़ कोलगेट के पास ही यह प्रमाण है।

इसका सजीव व प्रवेशकारी झाग दान्तों के बीच छुपी दरारों में फंसे हुए सड़ते अन्न के कणों को बाहर निकालता है, जिनसे दन्त-क्षय व दुर्गंधमय श्वास ज़्यादातर पैदा होते हैं।

बच्चे कोलगेट से अपने दान्त ब्रश करना पसंद करते हैं क्योंकि इसकी पेपरमिंट की ख़ुशबू ज़्यादा देर रहती है।

यदि आपको पाउडर पसंद हो तो कोलगेट टूथ पाउडर से भी वे सभी लाभ प्राप्त होंगे... महीनों तक चलता है।

रोज़ाना कोलगेट से ब्रश करने से—

- ✓ दन्त-क्षय का नाश होता है
- ✓ दुर्गंधमय श्वास ख़त्म होती है
- ✓ दान्त चमकीले सफ़ेद बनते हैं

COLGATE
DENTAL CREAM

सफ़ेद दांत व निर्मल श्वास के लिए सारी दुनिया में अधिक लोग किसी दूसरी डेन्टल क्रीम की अपेक्षा कोलगेट ही ख़रीदते हैं।

चन्दामामा

संचालक : चक्रपाणी

इस अंक में "गलीवर की यात्रायें" और "मार्कोपोलो की कथाएँ" समाप्त हो रही हैं।

"अमृत मंथन" भी इस मास समाप्त हो रहा है। हम एक और पद्य कथा प्रारम्भ कर रहे हैं।

अगले अंक में कुछ नये स्तम्भ शुरु करने का ख्याल है। प्रतीक्षा कीजिए।

"हमारे देश के आश्चर्य" के अन्तर्गत हम भारत के कई दर्शनीय स्थलों के बारे में लिख चुके हैं।

हम कालिदास के नाटक भी गद्य रूप में दे रहे हैं, हम आशा करते हैं कि ये भी पाठकों द्वारा पसन्द किये जायेंगे।

वर्ष : १२ जनवरी १९६१ अंक : ५
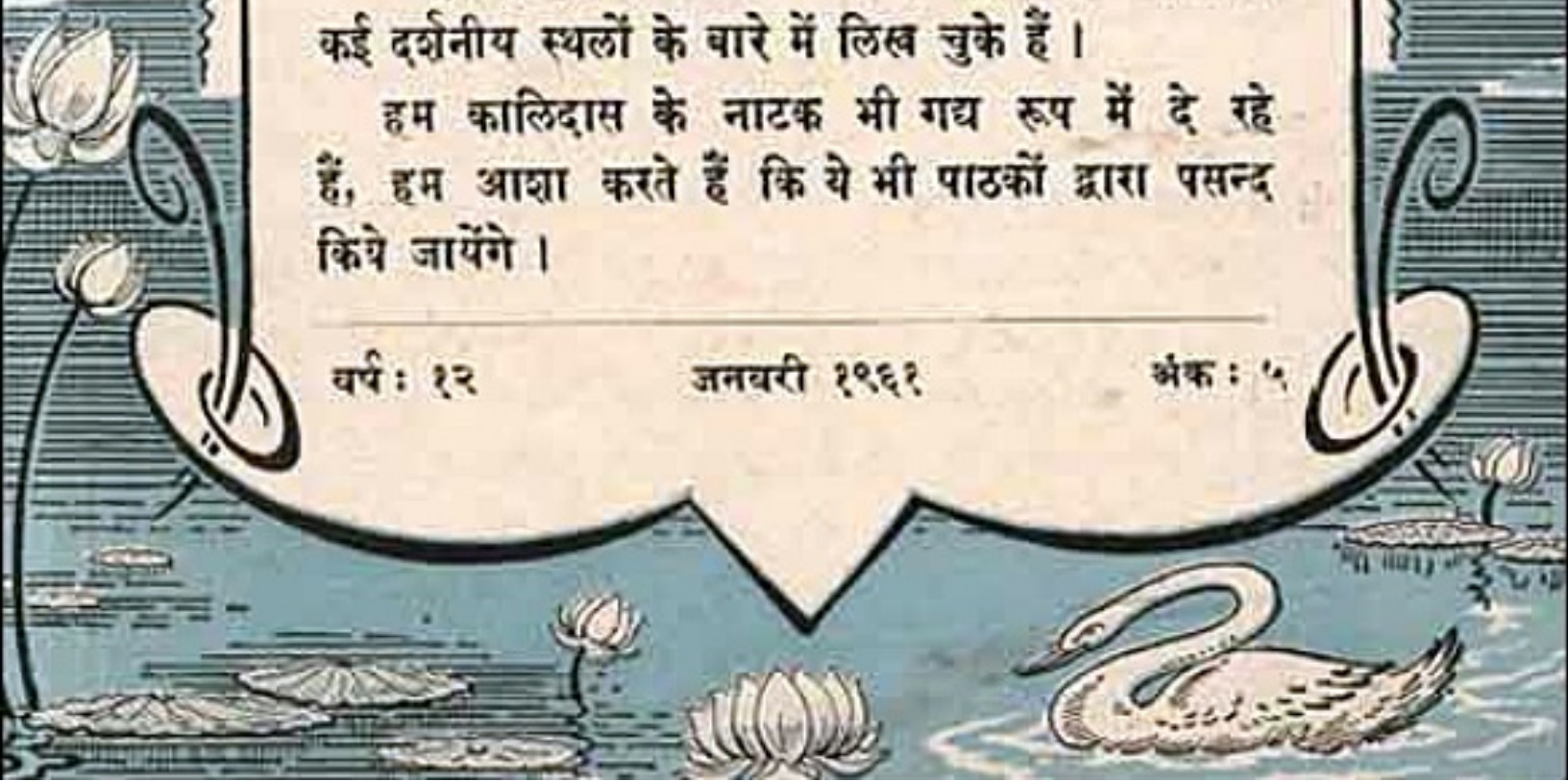
महाभारत

जब युद्धभूमि में मशालों की रोशनी फैल गई तो दोनों तरफ़ के योद्धा जोर शोर से लड़ने लगे। द्रोण ने भयंकर युद्ध शुरू किया। कर्ण तो द्रोण से भी बढ़कर युद्ध कर रहा था। उसके आक्रमण का पाण्डव सेना मुकाबला न कर सकी और मैदान छोड़कर भागने लगी।

युधिष्ठिर ने अर्जुन के पास आकर कहा—"देखा, कर्ण कितना भयंकर युद्ध कर रहा है! उसको रोकने का तुम्हें ही कोई उपाय सोचना होगा। अगर देरी की गई तो सर्वनाश होकर रहेगा।"

अर्जुन ने कृष्ण की सलाह माँगी। कृष्ण ने यों कहा—"इस समय तुम्हारा कर्ण के साथ युद्ध करना श्रेयस्कर नहीं है। जब इन्द्र ने उससे कवचकुण्डल ले लिए थे, तब उसने उसको वैजयन्ती नाम की महाशक्ति दी थी। उस अस्त्र को तुम पर उपयोग करने के लिए उसने रख रखा है। उस अस्त्र का कोई जवाब नहीं है। इस समय कर्ण का मुकाबला करनेवाला हम लोगों में केवल घटोत्कच ही है।"

कृष्ण ने घटोत्कच को बुलाकर कहा—"अब हमारी विजय तुम पर निर्भर है। कर्ण हमारी सेना को तहस नहस कर रहा है। तुम तो माया युद्ध में प्रवीण हो, तुम्हें उसका मुकाबला करना होगा।"

"तुम्हारी मदद भीम और सात्यकी करेंगे।" अर्जुन ने कहा।

"मुझे किसी की सहायता नहीं चाहिये। इन द्रोण और कर्ण को मैं अकेला ही खतम कर दूँगा।" कहता घटोत्कच अपनी सेना लेकर रणभूमि में घुस पड़ा। घटोत्कच को कर्ण की ओर जाता देख दुर्योधन ने

दुश्शासन से कहा—"जाओ, तुम कर्ण की सहायता करो।" उस समय जटासुर के लड़के अलम्बुस ने दुर्योधन के पास आकर कहा—"दुर्योधन महाराज! पापी पाण्डवों ने मेरे महाबलवान पिता को मार दिया है। यदि तुम्हारी अनुमति हो, तो मैं अभी जाकर उन पाण्डवों को मारकर उनके रक्त-माँस से अपने पिता की आत्मा की आराधना करूँगा।"

"तो पहिले जाकर उस घटोत्कच को मारो।" दुर्योधन ने कहा।

अलम्बुस घटोत्कच की तरफ़ लपका। दोनों में भीषण युद्ध हुआ। आखिर घटोत्कच ने अलम्बुस को गिरा दिया। उसका सिर तलवार से काट दिया। उसके बाल पकड़कर दुर्योधन के पास जाकर कहा—"यह देखो, तुम्हारा बन्धु मारा गया है। कर्ण की भी यही हालत होगी। कहते हैं राजा, ब्राह्मण, और स्त्री के पास खाली हाथ नहीं जाना चाहिये। इसलिए लो, मैं तुम्हारे लिए अलम्बुस का सिर लाया हूँ। जब तक कर्ण का सिर नहीं मिलता, इससे ही सन्तुष्ट हो।" यह कहकर उसने कर्ण पर हमला किया।

इतने में अलायुध नाम के एक और राक्षस ने दुर्योधन के पास आकर कहा—"दुर्योधन, बकासुर मेरे वंश का है। तुम जानते ही हो, बकासुर के साथ किम्मीर, हिडिम्ब भी भीम के द्वारा मारे गये हैं। मैं भीम और घटोत्कच दोनों को मार दूँगा। अपनी सेनाओं को ज़रा रुकने को कहो।"

दुर्योधन ने सन्तुष्ट होकर कहा—"तुम युद्ध करो, तुम्हारे पीछे पीछे हम भी युद्ध करेंगे।"

अलायुध जाकर भीम से भिड़ पड़ा। वह बड़ा बलवान था। उसने भीम तक को

चकरा दिया। यह देख कृष्ण ने कर्ण से लड़ने के लिए कुछ और योद्धा भेजा, ताकि घटोत्कच को अलायुध से लड़ने का मौका मिले। दोनों राक्षसों में भयंकर युद्ध हुआ। आखिर घटोत्कच ने अलायुध का सिर काट डाला और उसको इस तरह फेंका ताकि वह दुर्योधन के सामने गिरे। पाण्डव सेना में हज़ारों शंख एक साथ बजे।

इसके बाद घटोत्कच युद्ध करता कौरव सेना को, धृतराष्ट्र के लड़कों को मार मारकर नष्ट करने लगा।

यह देख कौरवों ने कर्ण के पास आकर कहा—"जैसे भी हो, तुम इस घटोत्कच को मार दो। यह हमें ज़िन्दा न छोड़ेगा। अर्जुन को भी मारा जा सकता है, पर हम इस घटोत्कच का मुकाबला नहीं कर सकते। तुम्हारे पास इन्द्र की दी हुई शक्ति है। उसका तुमने प्रयोग किया तो यह राक्षस पहिले मरेगा। अगर यह न मरेगा तो हमारी मौत होकर रहेगी।"

कौरवों की बुरी हालत देखकर कर्ण ने अपनी वैजयन्ती का उपयोग घटोत्कच पर किया। उसकी चोट से घटोत्कच मारा गया। घटोत्कच की मृत्यु पर पाण्डवों ने आँसू बहाये। केवल कृष्ण ही आनन्दित था। अर्जुन ने शोकभरी आवाज़ में पूछा—"हमारी इतनी हानि हुई है और तुम खुश क्यों हो रहे हो?"

"अर्जुन, तुम नहीं जानते मेरा मन कितना सन्तुष्ट है। कर्ण की महाशक्ति घटोत्कच पर व्यर्थ हो गई है। अब तो कर्ण की गिनती मृतों में ही समझो। अब वह तेरे हाथ ही मरकर रहेगा। महाशक्ति जब तक रहती तब तक तुम भी उसे न मार पाते। तुम्हारे लिए ही मैंने जान-बूझकर घटोत्कच को मरवा दिया है। यह समझ लो।" कृष्ण ने अर्जुन से कहा।

अमृत मंथन

कहा इन्द्र ने राजा बलि से
सभी उपद्रव का जब हाल,
बोले बलि तब—"अमृत का हम
भाग करेंगे दो तत्काल।"

बलि के भय से दैत्य सभी भी
खड़े हो गये झट चुपचाप,
और कलश वह उनके आगे
लाकर रक्खा अपने आप।

अमृत का बँटवारा करने
हुए सभी ज्यों ही तैयार,
त्यों ही सहसा एक सुन्दरी
आयी कर सोलह शृंगार।

मोहक उसका रूप, जवानी
अंग-अंग से फूट रही थी,
करती सबको मुग्ध वहाँ वह
नृत्य-ताल पर झूम रही थी।

उसे देख अप्सरियों ने भी
बाँधे तुरत पगों में नूपुर,
और घेरकर नाच-नाचकर
छेड़ दिया सबने मीठा सुर।

छूमछनन की पल में मीठी
गूँज उठी सहसा झनकार,
डूबा मादक स्वर-लहरी में
राजा बलि का वह दरबार।

कभी-कभी वह चतुर सुन्दरी
देख-देख जब मुस्काती,
असुर खुशी से चिल्ला उठते
फुला फुलाकर निज छाती।

बलि ने पूछा—"कहो सुन्दरी,
कहाँ तुम्हारा सुन्दर धाम?
मोह लिया तुमने है सबको
कहो मोहिनी, अपना नाम।

महेशनारायण सिंह

छू दो यदि तुम जल को भी तो
होगा पल में सुधा समान,
आओ तुम ही अपने कर से
करा हमें दो अमृत-पान।"

बलि का यह अनुरोध तुरत ही
किया मोहिनी ने स्वीकार,
दैत्य देवता दोनों ही तब
बैठे लम्बी लगा कतार।
लेकर अमृत-कलश हाथ में
बलि ने कहा—"इसे थाम लो,
दैत्यों औ' देवों को इसका
अमृत सारा अभी बाँट दो।"
कलश सुधा का लेकर बलि से
चली मोहिनी इठलाती,
आयी झट वह वहाँ, जहाँ थी
लगी देव-दैत्यों की पाँती।

आते ही वह असुरों को लख
मधुर भाव से मुस्कायी,
दैत्य हुए मोहित यों पल में
तन-मन की सब सुधि बिसरायी।

रहे देखते अपलक उसको
अमृत का भी रहा न ध्यान,
बैठे रहे अचल सब मानों
हों सब ही मूरत बेजान।
चतुर मोहिनी रही देखती
तो केवल दैत्यों की ओर,
किंतु पाँव वह रही बढ़ाती
इन्द्रादिक देवों की ओर।

पास पहुँच देवों के उसने
दैत्यों से यह कहा पुकार—
"पियो, पियो मैं अमृत की अब
गिरा रही कलसे से धार।"

मूर्ख दैत्य सब कर फैलाये
रहे बने मदहोश उधर,
और पिलाती देवों को ही
रही मोहिनी सुधा इधर।

महाविष्णु थे बने मोहिनी—
भेद न यह असुरों ने जाना,
भ्रम में भूले रहे दैत्य सब
देवों ने लेकिन पहचाना।

दैत्यों में था 'राहु' एक ही
जिसे हुआ मन में सन्देह,
देवों की पंक्ति में जा वह
अमृत पीने लगा सदेह।

लेकिन तत्क्षण सूर्य-चन्द्र ने
लिया राहु को जब पहचान,
पा करके संकेत विष्णु ने
किया चक्र का सब सन्धान।

सिर तो क्षण में कटा 'राहु' का
लेकिन गयी न उसकी जान,
सिर-धड़ दोनों हुए प्राणमय
क्योंकि किया था अमृत पान।

सिर धड़ दोनों ने गुस्से में
चन्द्र-सूर्य को बहुत खदेड़ा,
घिरी गगन में घटा चतुर्दिक
अंधकार ने डाला डेरा।

इसी बीच में वेष मोहिनी
का झटपट ही तज भगवान,
सौंप गये वह कलश इन्द्र को
और हुए तब अन्तर्धान।

क्रुद्ध हुए यह देख दैत्य सब
चिल्लाये—"वह सुन्दरी कहाँ!
अरे, कहाँ, वह गयी और वह
अमृत का है कलश कहाँ?"

जितने भी थे दैत्य वहाँ पर
दौड़ सब लेकर तलवार,
धरती काँप उठी उससे ही
मचा चतुर्दिक हाहाकार।

देवों पर वे टूट पड़े झट
लगे दिखाने अपना ज़ोर,
पर अमृत पी सभी देवता
नहीं रहे थे अब कमज़ोर।

लोहा डटकर लिया उन्होंने
दिखलाया रण में अति जोश,
जिसे देख उड़ चले पलक में
सारे ही दैत्यों के होश।

लगे फेंकने तब देवों पर
उठा-उठाकर दैत्य पहाड़,
किंतु देवता उनके सारे
निष्फल करते रहे प्रहार।

हुआ युद्ध अति घोर कि इतना
बह चली रक्त की धार,
लगे डूबने दैत्य उसीमें
मची बहुत ही चीख-पुकार।

जो सब उससे बचे तुरत वे
भाग गये छिपने पाताल,
विजय मिली आखिर देवों को
हुए दैत्यगण ही पामाल।

राजा बलि ने देखा सब कुछ
हुआ नहीं उनको कुछ कलेश,
शांत भाव से धीरे धीरे
चले गये वे अपने देश।

क्षीरोदधिमंथन से निकली
चीजें लेकर इन्द्र गये
साथ देव सब और वासुकी
भी उनके ही स्वर्ग गये।

शेष बचा था दिव्य कलश में
अमृत का जो भाग,
उसे इन्द्र ने दिया वासुकी
को कर अति अनुराग।

अमृतमंथन का आखिर यह
निकला शुभ परिणाम,
हुए देवता अमर सभी औ'
फैला जगमें उनका नाम!

[समाप्त]

[१२]

[नागवर्मा अपनी सारी सेना कपिलपुर के किले में खो बैठा। वेष बदलकर वह अग्निद्वीपवालों के नायक करवीर के साथ जंगल में भाग गया। इसके बाद राजकुमारी कान्तिमति और चित्रसेन का विवाह हुआ। विवाह के अवसर पर चित्रसेन ने उग्राक्ष की नई इच्छा पूरी करने का वचन दिया। बाद में]

उग्राक्ष ने जब राक्षसों को आवाज़ दी, तो जहाँ जहाँ किले में राक्षस थे, उसके पास भागे भागे आये। उग्राक्ष ने उन सबको चित्रसेन को दिखाते हुए कहा—"महराज, जब कभी आपको हमारी सहायता की ज़रूरत हो तो मैं और मेरे सेवक उसके लिए तैयार हैं। मेरे किले में बस खबर भेजने की देर रहेगी।"

चित्रसेन मुस्कराया। "मेरी यह इच्छा है कि तुम्हारे सेवकों की सहायता के बिना मेरा शासन शान्तिपूर्वक चलता रहे। अच्छा होगा यदि तुम्हारे सेवक नागवर्मा और उसके अनुचर करवीर को जो जंगलों में भाग गये हैं पकड़कर लायें। यदि हम पर या तुम पर कभी कोई आपत्ति आयेगी तो उन्हीं दोनों की वजह से।" चित्रसेन ने कहा।

"वे फिलहाल कहीं गायब हो गये हैं। उनका कुछ पता नहीं है। मेरा विश्वास है

कि वे बहुत समय तक जंगलों में छुपे नहीं रह सकते। आज से मैं अपने आधे आदमियों को उनको ढूढ़ने में लगाऊँगा।" उग्राक्ष ने कहा।

शेर का चमड़ा पहिननेवालों में से जो अमरपाल उनमें शामिल हो गया था, उसको विश्वास न रहा कि वे कभी पकड़े जायेंगे। उसने निराश हो सिर हिलाते हुये कहा—"महाराज! वे अब तक पूर्वी समुद्र के अग्निद्वीप के लिए रवाना हो रहे होंगे, ऐसा मेरा ख्याल है।" चित्रसेन को भी यही ख्याल सता रहा था। उग्राक्ष उसको नमस्कार करके अपने सेवकों को लेकर अपने किले की ओर चल दिया।

दो तीन महीने गुज़र गये। चित्रसेन को इस बीच गुप्तचरों द्वारा खबर मिली कि राज्य में जहाँ तहाँ डाके डाले जाने लगे थे। घर जलाये जाने लगे थे। यह भी मालूम हुआ कि डाका डालनेवाले ऐसे दुष्ट थे जिनको किसी बात की परवाह न थी। वे जंगली रास्तों के पास पहाड़ की घाटियों में छुपे रहते। यदि कोई यात्री उस तरफ़ से निकलते तो उन पर हमला करते, मार पीट करते और जो कुछ उनके पास होता लूट लेते और भाग जाते। अगर कोई उनका मुकाबला करता तो उनके गाँवों को जला देते। अब तक इनमें से कोई ज़िन्दा नहीं पकड़ा गया था। अगर कोई घायल होकर गिरोह से अलग हो जाता तो वह विष खाकर मर जाता। इस तरह उन लुटेरों से पूछताछ करके यह मालूम करना असम्भव था कि उनका नायक कौन था, या वे कहाँ रहते थे।

चित्रसेन ने अपने आदमियों को भेजकर राज्य के ग्रामों में, जंगलों में, यह घोषणा करवा दी, जो अब तक डाकू या लुटेरे

रहे हैं, अगर वे हथियार छोड़कर अपने को सौंप देंगे और राजधानी कपिल नगर आयेंगे तो उनमें से हरेक को खेतीवाड़ी के लिए भूमि और पशु दिये जायेंगे।

चित्रसेन की यह चाल चल गई। अभी सप्ताह भी न हुआ था कि पचास डाकू अपनी तलवार, कटार वगैरह लेकर कपिलपुर आये। वे जब राजमहल के प्रांगण में जमा हो गये तो वह अमरपाल को, जिसको उसने अपना सेनापति नियुक्त किया था, साथ लेकर वहाँ गया। डाकुओं में से कुछ को अमरपाल ने दिखाकर कहा—"महाराज, इनमें से कुछ अवश्य नागवर्मा के सैनिक हैं। इनका विश्वास करके इनको भूमि वगैरह देना खतरनाक है।"

"तुम्हारा नायक नागवर्मा कहाँ है? क्या उसीने तुम्हें भेजा है?" चित्रसेन ने डाकुओं से पूछा।

"महाराज, हमारा कोई नायक नहीं है। जैसा आपने सन्देह किया है हम कभी नागवर्मा के नीचे ही काम करते थे। मगर जब आपने हमें उस किले में घेर लिया था और हम पर राक्षस छोड़ दिये थे हम सब अलग अलग रास्ते भाग गये। उस दिन से आज तक हम यह नहीं जानते कि वह नागवर्मा कहाँ है और क्या कर रहा है।" डाकुओं के सरदार ने कहा।

"तुम्हारी बातों का कैसे विश्वास किया जाय?" चित्रसेन ने पूछा।

"आपकी घोषणा के अनुसार साधारण लोगों की तरह ज़िन्दगी बसर करने के लिए हम अपने को सौंपने यहाँ आये हैं। हम केवल अपने गुज़ारे के लिए चोरी डाके करते आये थे। हम प्रार्थना करते हैं कि आप हमारे अपराध क्षमा करके हमें मामूली

अमरपाल ने चित्रसेन के कान में कहा—"महाराज! इनकी बातों का विश्वास नहीं किया जा सकता। यह जानने के लिए इनके पीछे नागवर्मा की साज़िश है कि नहीं इन सब को कुछ दिन जेल में डाल देना मुझे उचित मालूम होता है।"

"यह नहीं हो सकता। इसका मतलब तो यह होगा कि मैं वचन देकर मुकर गया। इसके बाद जनता में मेरी बात का मूल्य ही न रहेगा।" चित्रसेन ने कहा।

"तो अब थोड़ी देर ठहरिये। मैं इनको डराकर देखता हूँ।" कहते हुए अमरपाल ने डाकुओं की ओर मुड़कर कहा—"महाराज का ख्याल है कि तुम में से कुछ अवश्य यह जानते हैं कि नागवर्मा कहाँ है और शेर का चमड़ा पहिनने वालों का नायक करवीर कहाँ है। अगर तुमने न बताया तो तुम्हारी बोटी बोटी कटवा दूँगा।" अमरपाल ने कहा।

अमरपाल के यह कहते ही डाकुओं के नायक ने हाथ आगे बढ़ाया। उसके साथियों ने भी यही किया। सरदार ने ऊँची आवाज में कहा—"महाराज! भले

प्रजा के तौर पर स्वीकार करें।" डाकुओं के सरदार ने कहा।

"खैर, तुम्हारी बातों का विश्वास करके तुम्हें खेतीबाड़ी के लिए भूमि दे रहा हूँ। पर तुम पचास से अधिक तो नहीं नजर आते हो। और चोर कहाँ हैं!" चित्रसेन ने पूछा।

"जब औरों को मालूम हो जायेगा कि आपने हम पर दया करके हमें क्षमा कर दिया है तो और भी स्वयं आपकी शरण में आ जायेंगे।" डाकुओं के सरदार ने कहा।

और बुरे के लिए हम तैयार होकर आये हैं। हमारे हाथों की ओर देखिये इनमें ऐसा विष है जो क्षण भर में प्राण ले सकता है। आपके सैनिकों के हमारे पास आने से पहिले हम विष खाकर मर सकते हैं। हम फिर एक बार प्रमाण करके कहते हैं कि न नागवर्मा के बारे में न करवीर के बारे में ही हम कुछ जानते हैं।"

डाकुओं के नेता के यह कहने पर अमरपाल को भी उसकी बातों पर विश्वास हो गया। चित्रसेन ने डाकुओं की ओर देखकर मुस्कराते हुए कहा—"आज से तुम भी राज्य की जनता हो। तुम्हें भी वे अधिकार प्राप्त हैं जो औरों को प्राप्त हैं। तुम्हें राजधानी के पास ही खेती के लिए भूमि दिलवाता हूँ।" चित्रसेन ने कहा ही था कि डाकू उसकी जयजयकार करने लगे। "चित्रसेन महाराजा की जय हो" उन्होने हर्ष ध्वनि की।

यह पता लगते ही कि चित्रसेन महाराजा ने डाकुओं को दण्ड न दिया था और उनको उसने भूमि भी दी थी राज्य के सब डाकुओं के गिरोहों ने कपिलपुर आकर अपने को राजा को सौंप दिया। अब चित्रसेन को विश्वास हुआ कि उसका शासन निर्विघ्न चल सकेगा। परन्तु उसे कभी कभी सन्देह होते रहते, द्रोही नागवर्मा कहाँ है! क्या वह अभी जीवित है? यदि जीवित है तो कहाँ है! परन्तु अमरपाल कहता रहा कि नागवर्मा करवीर के साथ अग्निद्वीप पहुँच गया होगा। अगर यही हुआ होगा तो किसी न किसी दिन वे फिर भयंकर पक्षियों को लेकर राज्य पर हमला करेंगे ही।

यूँ तो यह चिन्ता थी ही। जब उसको मालूम हुआ कि उसकी पत्नी गर्भवती थी

तो उसकी चिन्ता और भी बढ़ गई। जो भी सन्तान होगी। लड़की या लड़का पांच साल तक उसे पाल पोसकर राक्षस उग्राक्ष को दे देना था। इस राक्षस को अपने किले में एक मनुष्य को पालने की इच्छा हुई ही क्यों!

महीने बीत गये। रानी कान्तिमति ने एक दिन सवेरे एक लड़के को जन्म दिया। राज्य में आनन्दोत्सव हुए। जनता खुशियाँ मना रही थी। इन उत्सवों के बीच उग्राक्ष राजमहल में आया। कुछ दूरी से उसने राजकुमार को पालने में देखा और बच्चों की तरह उछल उछलकर किलकारियाँ भरने लगे।

"महाराज, आज से पाँच साल बाद यह लड़का मेरा हो जायेगा।" उग्राक्ष ने कहा।

वर्ष बीत रहे थे। कपिलपुर राज्य में, रात के समय कहीं-कहीं आकाश में लपटें दिखाई देने लगीं। लोग उनको अग्निपक्षी बता रहे थे। होते-होते इसकी खबर चित्रसेन के पास भी पहुँची। राज्य में घूम फिरकर गुप्तचरों ने यह निश्चित किया कि वे अग्निपक्षी थे।

चित्रसेन ने सोचा कि यह एक और आफ़त थी। इतने में राजकुमार भी पाँच साल का हो गया। एक दिन सवेरे उग्राक्ष तूफ़ान की तरह राजमहल के सामने आया।

"महाराज, आ गया हूँ। कहाँ है राजकुमार!" राक्षस ने कहा।

"अभी आ रहा है। नये कपड़े उसे पहिनाकर सजा रहे हैं, ठहरो।" चित्रसेन ने कहा।

उग्राक्ष को यह देख आश्चर्य हुआ कि चित्रसेन के मुँह पर कोई दुःख के चिन्ह न थे। अपनी पहिली सन्तान को बिना

किसी चिन्ता के निश्चिन्त हो, वह मुझे सौंप रहा है। क्यों? कहीं लड़का काना या लँगड़ा तो नहीं है!

उग्राक्ष अभी यह सोच रहा था कि दासियों ने एक हट्टकट्टे तन्दुरुस्त लड़के को लाकर उसके सामने रखा। उग्राक्ष ने उस लड़के को देखकर ताली पीटी। दोनों हाथ पकड़कर, कन्धे पर बिठाकर बड़े-बड़े कदम रखता, किले के द्वार से जंगल में गया। जाते-जाते कहता गया। "महाराज, मैं आपका भला कभी न भूलूँगा।"

उग्राक्ष के जंगल में पहुँचते ही उसके कन्धे पर बैठे हुए लड़के ने कहा—"अरे भाई, मुझे इस पेड़ के नीचे का सूखा डंडा चाहिए।" उसने उसे पाने की ज़िद पकड़ी।

उग्राक्ष ने कन्धे पर से बच्चे को उतार कर, डंडा लाकर देते हुए प्यार से पूछा—"बेटा, इस डंडे का क्या करोगे?"

"रसोई में, इस डंडे से मुर्गों और कुत्तों को नहीं आने दूँगा।" लड़के ने कहा।

उग्राक्ष चौंका। राजकुमार और उसका यह कहना क्या कि वह रसोई में मुर्गों और कुत्तों को नहीं आने देगा!

"अरे भाई, तुम्हारा पिता क्या करता है?" उसने उससे पूछा।

"रसोई में माँस और शाक सब्जी बनाता है। अगर कभी कोई कुत्ता माँस उठाने आया तो इस डंडे से उसकी पीठ तोड़ दूँगा।" लड़के ने कहा।

"इतना धोखा! रसोइये के लड़के को राजकुमार बताकर मुझे देता है!" उग्राक्ष उबल उठा। लड़के को कन्धे पर बिठा लाल पीला होता वह कपिलपुर के किले की ओर चल दिया। (अभी है)

उर्वशी-पुरूरव

एक दिन रम्भा, उर्वशी आदि अप्सरायें कुबेर के नगरी अलकापुरी से वापिस आ रही थीं कि हिरण्यपुर के रहनेवाले केशी नामक राक्षस ने हेमकूट पर्वत प्रान्त में उर्वशी और उसकी सहेली चित्रलेखा को पकड़ लिया। उनको लेकर वह ईशान्य दिशा की ओर चल दिया।

तुरत रम्भा आदि ज़ोर से चिल्लाईं—"बचाओ, रक्षा करो।"

इनका चिल्लाना पुरूरव सम्राट को सुनाई दिया। वह प्रतिष्ठानपुर का राजा था। बड़ा योद्धा था। उसने कई बार इन्द्र की युद्धों में सहायता करके अच्छी कीर्ति पायी थी। वह प्रातःकालीन पूजा-कृत्य पूरा करके नगर की ओर जा रहा था कि रम्भा आदि का आर्तनाद उसे सुनाई दिया। सारी बात मालूम करके उसने कहा—"तुम न डरो। मैं तुम्हारी सहेलियों को ले आऊँगा।"

फिर पुरूरव भी सोमदत्त नामक रथ पर सवार होकर ईशान्य दिशा की ओर चल पड़ा। रम्भा आदि हेमकूट पर्वत पर चढ़ीं।

पुरूरव ने एक वायव्यास्त्र छोड़कर केशी की सेना को तितर-बितर कर दिया। उर्वशी ओर चित्रलेखा की रक्षा करके, अपने रथ पर सवार करके वापिस आने लगा। उर्वशी, जो केशी के पकड़े जाने पर मूर्छित हो गई थी, फिर होश में आई। वह जान गई कि उसकी रक्षा करनेवाला पुरूरव था। उसी समय उन दोनों के मनमें प्रेम उपजा।

आते हुए रथ पर मृग का चिन्ह देखकर रम्भा आदि अप्सराओं ने सोचा कि पुरूरव विजय पाकर वापिस आ रहा था। उर्वशी और रम्भा के फिर एक बार

मिलने पर सन्तोष की सीमा न रही। उन्होंने उसकी प्रशंसा की। "मैंने तो कुछ भी नहीं किया। यह सब उस इन्द्र की कृपा है।" पुरूरव ने कहा।

इस बीच नारद ने आकर इन्द्र को बताया कि केशी उर्वशी को उठाकर ले गया था। इन्द्र ने चित्ररथ नाम के गन्धर्व को बुलाकर कहा—"उर्वशी बड़ी डरपोक है। उसको केशी से बचाकर लाओ।"

चित्ररथ गन्धर्वों की सेना के साथ आ रहा था तो कुछ चारण दिखाई दिये। उन्होंने बताया—"पुरूरव उर्वशी को बचाकर ले आया है। सब अप्सरायें उनके साथ हेमकूट पर्वत पर हैं।"

चित्ररथ ने वहाँ पहुँचकर पुरूरव से कहा—"महानुभाव, नारायण मुनि ने अप्सराओं में सबसे अधिक सुन्दर उर्वशी को बनाकर, इन्द्र को दिया। अब आप फिर उसकी रक्षा करके, इन्द्र को दे रहे हैं। इसलिए आप भी हमारे साथ स्वर्ग आकर इन्द्र की कृतज्ञता स्वीकार कीजिये।"

परन्तु पुरूरव ने कहा कि नगर में उसको काम था और वह तब स्वर्ग न आ सकेगा। पुरूरव को छोड़कर जाने में उर्वशी को बड़ा दुःख हुआ। वह स्वयं उससे विदा भी न ले सकी। उसने अपनी सहेली चित्रलेखा से कहला भेजा। "अच्छा, जाइये। पर मुझे न भूलिये।" पुरूरव ने कहा। जब तक वे अप्सरायें आँखों से ओझल न हो गईं, वह खड़ा रहा, उनके चले जाने के बाद प्रतिष्ठानपुर गया।

पुरूरव, क्योंकि उर्वशी को प्रेम करने लगा था इसलिए उसके चले जाने के बाद बड़ा दुःखी रहने लगा। उसका माणवक नाम का एक मजाकिया मित्र था। पुरूरव ने उससे अपने प्रेम के बारे में

कहा। क्योंकि यह रहस्य था, इसलिए माणवक ने यह किसी से न कहा।

उसकी मुख्य रानी काशिकादेवी ने देखा कि उसके पति किसी कारण दुःखी थे। उसने अपनी परिचारिका निपुणिका से राजा के दुःख का कारण मालूम करने के लिए कहा।

निपुणिका का नाम सार्थक था। वह अकेले में बैठे माणवक के पास गई। उसने उससे कहा—"रानी ने मुझे तुम्हारे पास भेजा है।" माणवक ने निपुणिका को देखते ही सोचा—"इससे ज़रा सम्भल कर बात करनी होगी।" उसने उससे पूछा—"रानी की क्या आज्ञा है?"

"जब मैं इतना दुःखी हूँ, तो क्या तुम्हारा चुप रहना ठीक है? रानी ने यह तुमसे मुझे कहने के लिए कहा है।" निपुणिका ने कहा।

"क्या राजा ने उनके साथ कोई अन्याय किया है?" माणिवक ने पूछा।

"क्या यह अन्याय नहीं है कि राजा ने रानी को सम्बोधित करते समय उस स्त्री का नाम लिया, जिससे वे प्रेम कर रहे थे।" निपुणिका ने कहा।

यह देख कि राजा ने अपना भेद स्वयं ही कह दिया था, माणवक ने कहा—"क्या उन्होंने उर्वशी कहकर पुकारा था? जब से इन्होंने उर्वशी को देखा है, तबसे वे पगलाये हुए हैं।" उसने सारा रहस्य बता दिया।

निपुणिका ने निपुणता से अपना काम पूरा करके रानी को सब कुछ बता दिया।

"अब जब जो जो हो, मुझे आकर बता दो।" रानी ने अपनी दासी से कहा।

राजा ने अपने मजाकिये मित्र को बुलाकर कहा—"मैं वियोग का दुःख

दोनों मिलकर उद्यान में गये। वहाँ बसन्त की शोभा थी, राजा का दुःख और भी बढ़ गया। राजा ने उस दुःख को कम करने के लिए कोई उपाय बताने के लिए कहा। विदूषक ने कुछ देर सोचकर कहा—"सो जाओ, सपने में उर्वशी दिखाई देगी और तुम्हें आनन्द मिलेगा। नहीं तो उर्वशी का चित्र बनाकर उसको देखकर सन्तुष्ट होओ।"

"नींद आना तो असम्भव है। उर्वशी का यदि चित्र बनाने लगूँ, तो आँखों से इतने आँसू बहेंगे कि कुछ दिखाई नहीं

सह नहीं पा रहा हूँ। कहाँ जाने से यह दुःख कम होगा, ज़रा बताओ तो।"

"अगर आपने भोजनशाला में जाकर खूब भोजन किया, तो आपके दुःख जाते रहेंगे।" मजाकिये माणवक ने कहा।

"तुम खाऊ हो, इसलिए तुम्हारा दुःख आसानी से चला जायेगा। मेरा दुःख तो उर्वशी को देखे बगैर जायेगा नहीं।" पुरूरव ने कहा।

"जितने तुम दुःखी हो, क्या उर्वशी उतनी दुःखी नहीं होगी! उसे ही तुम्हें ढूँढ़ते आने दो।" मजाकिये ने कहा।

देगा।" पुरूरव ने कहा।

"तो कोई तीसरा रास्ता नहीं है।" विदूषक ने कहा।

इतने में उर्वशी अपनी सहेली के साथ आई। अदृश्य हो कुछ दूरी पर खड़ी रही। उसने वे बातें सुनीं, जो पुरूरव ने अपने मित्र से कही थीं। उसे यह जान बड़ा सन्तोष हुआ कि उसको उस पर प्रेम था। परन्तु राजा के सामने वह अपना प्रेम न व्यक्त कर सकी। किन्तु पेड़ के छिलके पर दो पद लिखे, जिनमें उसने अपना प्रेम व्यक्त कर दिया, उस छाल को राजा के सामने फेंक दिया।

उसको विदूषक मित्र माणवक ने देखा। और उसे राजा को दिया। राजा ने उन पदों को पढ़ा। यह जान कि उन्हें उर्वशी ने लिखा था, वह बड़ा आनन्दित हुआ। फिर उसे उसने माणवक को देते हुए कहा—"इसे सम्भलकर रखो।"

अब उर्वशी और चित्रलेखा राजा के सामने प्रत्यक्ष हुईं। पर अभी पुरूरव जी भर के उर्वशी से बात भी न कर पाया था कि इन्द्रलोक से उर्वशी के लिए बुलावा आया। भरत मुनि ने लक्ष्मी स्वयंवर नाम का एक नाटक लिखा। उसमें लक्ष्मी की भूमिका उर्वशी को दी गई। उस नाटक को इन्द्र के समक्ष प्रदर्शित करना था। उर्वशी और कर ही क्या सकती थी, पुरूरव से विदा लेकर अपनी सहेली के साथ इन्द्रलोक चली गई।

इस बीच दो बातें हुईं। माणवक ने वह छाल खोदी, जिस पर उर्वशी ने पद लिखे थे। निपुणिका से यह मालूम कर कि उद्यान में राजा अपने मित्र माणवक से बातें कर रहा था काशिकादेवी भी वहाँ आई। वह अपनी दासी के साथ छुप गईं और उनका सम्भाषण सुनने लगीं।

इस बीच वह छाल का टुकड़ा हवा में उड़ता उड़ता उनके पास आया। उसे पढ़कर रानी उबल पड़ी, "लगता है आप इसे खोज रहे हैं। यह देखो, उर्वशी का प्रेम पत्र।" कहती वह सामने आई। राजा और करता भी तो क्या करता, उसने उससे क्षमा माँगी। परन्तु वह राजा को क्षमा किये बगैर ही जल्दी जल्दी चली गई।

परन्तु अन्तःपुर में पहुँचकर उसे पश्चात्ताप हुआ। उसने अपने पति को सन्तुष्ट करने के लिए एक व्रत करने का निश्चय किया।

लज्जित हुई और सिर नीचा कर खड़ी हो गई। इन्द्र को उस पर दया आयी। "हम पर पुरूरव का बहुत ऋण है। तुम उसके पास जाकर उसको एक लड़का देने तक वहीं रहो, फिर यहाँ वापिस चले आना।"

उर्वशी को शाप से उपकार ही हुआ। वह तुरत सहेली के साथ पुरूरव के महल में गई। वह एक तरफ़ हटकर छुपकर राजा और विदूषक की बातें सुनने लगीं। पर इतने में रानी को आता देख उन्होंने बातें करना बन्द कर दिया।

उस दिन उस व्रत को देखने आने के लिए राजा के पास खबर भेजी। राजा तभी विदूषक मित्र के साथ निकल पड़ा। रानी की प्रतीक्षा करते करते उसने उर्वशी के बारे में भी कुछ कहा।

इन्द्र के समक्ष लक्ष्मी के वेष में रंगस्थल पर उर्वशी आई। स्वयंवर में उसको कहना था कि वह विष्णु को वर चुन रही थी, पर उसने कहा—"मैं पुरूरव को चुनती हूँ।" नाटक के लेखक भरत ने क्रुद्ध होकर शाप दिया—"तुम देवलोक में न रहो, न तुम में दिव्य ज्ञान ही रहे।" उर्वशी

पुरूरव ने रानी से इस तरह बातचीत की, जैसे कि वह उससे बड़ा प्रेम करता हो। मगर रानी ने कहा—"चाहे आप किसे भी प्रेम करें, पर मुझे भी उसके समान देखें।"

"मैं सिवाय तुम्हारे किसी और को प्रेम नहीं करता।" राजा ने यह कहकर छुपी हुई उर्वशी को निराश किया। रानी जब जाने लगी, तब राजा ने उसको जाने से रोका भी। रानी ने कहा कि उसको व्रत करना था, इसलिए वह वहाँ न रह सकती थी। वह चली गई।

रानी के जाते ही पुरूरव उर्वशी के लिए छटपटाने लगा। यह देख उर्वशी का सन्देह जाता रहा। वह पुरूरव के सामने आई।

इसके बाद उर्वशी और पुरूरव बिना किसी रुकावट के यथेच्छ पर्वतों और जंगलों में घूमते फिरते सुखपूर्वक समय बिताने लगे। उर्वशी गर्भिणी हुई। उसके एक लड़का होगा। पुरूरव के उस लड़के को देखने के बाद उसे वापिस फिर स्वर्ग चले जाना होगा। क्योंकि वह पुरूरव को छोड़कर न जाना चाहती थी इसलिए उसने अपने गर्भ के बारे में किसी से न कहा। राजा के बिना जाने ही उसने एक लड़के को जन्म दिया। उस लड़के को वह च्यवन महाऋषि के आश्रम में ले गई। वहाँ रहनेवाली सत्यवती नाम की तपस्विनी को अपने लड़के को पालने पोसने के लिए कहा। फिर वह प्रतिष्ठानपुर वापिस चली आई। वह लड़का च्यवनाश्रम में दिन प्रति दिन बढ़ने लगा।

कुछ वर्ष बीत गये। एक दिन पुरूरव अपनी पत्नियों के साथ प्रयाग में स्नान करने के लिए निकला। उर्वशी अपना अलंकार कर रही थी। दासी उसके सिर पर एक मणि रखने के लिए तश्तरी में ला रही थी कि एक गिद्ध उसको माँस का टुकड़ा समझकर उठा ले गया। यह बात पुरूरव को पता लगी। इससे पहिले कि वह अपना बाण मँगा सका कि गिद्ध बहुत दूर चला गया। राजा ने जलाद को बुलाकर कहा—"मालूम करो, उसका घोंसला कहाँ है। जिस घोंसले में वह बैठे, वहाँ से मणि उठा ले आओ।"

परन्तु वह गिद्ध किसी भी घोंसले में नहीं बैठा। वह च्यवन आश्रम की ओर जा रहा था। तब उर्वशी के लड़के ने

उसे बाण से मारा। यह बात च्यवन ऋषि को मालूम हुई।

"इसने आश्रम के नियमों के विरुद्ध काम करने शुरु कर दिये हैं। इसे इसके माँ-बाप को सौंप दो।" उसने सत्यवती से कहा।

पुरूरव के भेजे जल्लाद को गिद्ध का शरीर और उसके मुख में मणि दिखाई दी। पुरूरव ने जब उस बाण पर लिखे अक्षरों को देखा, तो उसे विश्वास नहीं हुआ। उस पर लिखा था, "यह उर्वशी और पुरूरव के पुत्र का है।"

इतने में सत्यवती उसको साथ लेकर राजा के पास आई। यह सोच कि जिस प्रकार इन्द्र का जयन्त लड़का था, उसी प्रकार उसका भी एक लड़का था, पुरूरव बड़ा सन्तुष्ट हुआ। उर्वशी का शोकातुर हो जाना उसे समझ में नहीं आया। उर्वशी ने सब कुछ बताकर कहा—"अब आप जान गये हैं कि यह हमारा लड़का है। अब मुझे स्वर्ग जाना होगा।

"यदि तुम्हें जाना ही होगा, तो मैं इसका पट्टाभिषेक करवा दूँगा और वन में जाकर तपस्या करूँगा।" पुरूरव ने कहा।

इन्द्र को यह पता लगा। उसने नारद मुनि को पुरूरव के पास भेजा। नारद ने पुरूरव से कहा—"राजा, तुमसे अभी इन्द्र को बड़ी मदद मिलनी है। वन में जाने की आवश्यकता नहीं है, न उर्वशी को भेजने की ज़रूरत है। इन्द्र ने यह मुझे तुमसे कहने के लिए भेजा है।"

यह सुन उर्वशी और पुरूरव बड़े खुश हुए। परन्तु पट्टाभिषेक हुआ। रम्भा आदियों ने अभिषेक के अवसर पर पुण्य जल लाकर दिया। पुरूरव ने राज्य का भार, अपने लड़के, युवराज पर छोड़कर, उर्वशी के साथ सुखपूर्वक गृहस्थी निभाई।

संजीवनी फल

एक राजा को किसी ने एक फल देते हुए कहा—"महाराज, यह संजीवनी फल है। जो इसे खाता है वह मरता नहीं है।"

राजा ने इस बात पर विश्वास किया। खुश होकर उसे ले रहा था कि विदूषक ने बढ़कर उसे ले लिया और स्वयं खा गया।

राजा को बड़ा गुस्सा आया। "दुष्ट कहीं का। मैंने फल खाकर चिरंजीवी होना चाहा और तुम उसे निगल गये। तुम्हारा सिर कटवादूँगा।"

"महाराज, यदि यह सचमुच संजीवनी फल हो, तो आप मुझे कैसे मार सकते हैं?" विदूषक ने पूछा।

"नहीं, मुझे विश्वास नहीं है कि यह संजीवनी फल है। तुम्हारा सिर कटवादूँगा।" राजा ने कहा।

"अगर यह मामूली फल हो, तो क्या इसके लिए मेरा सिर कटवादेंगे?" विदूषक ने पूछा।

यह सुनते ही दरबारी ठट्ठा मारकर हँसे। उनके साथ राजा भी हँसा।

वररुचि

वेतसम नामक नगर में देवस्वामी और करम्भक नाम के दो भाई रहा करते थे। उनके व्याड़ी और इन्द्रदत्त नाम के दो लड़के थे। व्याड़ी का पिता गुज़र गया, उसके भाई को वैराग्य हो गया और वह कहीं चला गया। उन दोनों की पत्नियाँ भी पतियों के शोक में मर गईं। व्याड़ी और इन्द्रदत्त धनी थे, पर छुटपन में ही अनाथ हो गये थे।

उन्होंने अच्छे गुरु के पास शिक्षा ग्रहण करनी चाही। इसलिए उन्होंने कुमारस्वामी की प्रार्थना की। उस देवता ने सपने में प्रत्यक्ष होकर उनसे कहा :—

"नन्द के पाटलीपुत्र में वर्ष नाम का ब्राह्मण है। उसके पास शिक्षा ग्रहण करो।" व्याड़ी और इन्द्रदत्त पाटलीपुत्र गये। पूछताछ करने पर यह तो मालूम हुआ कि उस नगर में वर्ष नाम का एक मूर्ख तो था, पर उपाध्याय कोई न था। वे उस मूर्ख के घर ही गये। वर्ष का घर तो गरीबी का ही घर मालूम होता था।

उन लड़कों ने उसकी पत्नी के चरण छूकर, अपना काम बताया। उसने उनसे कहा— "मेरे पति, एक समय अवश्य मूर्ख थे, पर कुमारस्वामी को सन्तुष्ट कर, उन्होंने अब सम्पूर्ण विद्यायें सीख ली हैं। जब तक कोई तुम कोई ऐसा व्यक्ति नहीं लाते, जो एक बार सुनकर सब याद कर ले तब तक वे कुछ न पढ़ायेंगे।" उन्होंने वर्ष की पत्नी को सौ वराह दिये और एक ऐसे व्यक्ति को ढूँढने निकल पड़े जो एक बार सुनकर सब स्मरण कर ले। जाते जाते वे कोशाम्बी नगर पहुँचे।

कोशाम्बी नगर में सोमदत्त नाम का एक ब्राह्मण था, उसकी पत्नी का नाम था

वसुदत्ता। उसका एक लड़का था। नाम था वररुचि। वररुचि अभी छोटा ही था कि सोमदत्त मर गया। उसकी पत्नी ने जैसे तैसे उसका भरण पोषण किया। भाग्य से व्याड़ी और इन्द्रदत्त उनके घर ही अतिथि होकर आये।

उस समय वाद्यों की ध्वनि सुनाई दी। "तुम्हारे पिताजी का मित्र नन्द नृत्य कर रहा है।" वसुदत्ता ने वररुचि से कहा और पति का स्मरण होते ही उसकी आँखों में तरी आ गई।

तुरन्त वररुचि ने माँ से कहा—"मुझे वहाँ जाने दो माँ। वह सब देखकर, मैं आकर वे गीत गाकर, नृत्य करके तुम्हें फिर दिखाऊँगा।"

यह सुन व्याड़ी और इन्द्रदत्त चकित रह गये। वसुदत्ता ने उनसे कहा—"सच है, यह जो एक बार सुन लेता है, उसे हमेशा याद रहता है।"

व्याड़ी, इन्द्रदत्त को इस पर विश्वास नहीं हुआ। उन्होंने उसकी परीक्षा करने के लिए कुछ पढ़ा। वररुचि ने जो कुछ सुना था, उसे फिर सुनाकर उनके सामने दुहरा दिया। फिर वररुचि उनको साथ लेकर उस जगह गया, जहाँ नृत्य हो रहा था। वापिस आने के बाद, जो कुछ उसने सुना, देखा था, उसे गा-गाकर नृत्य करके दिखाया।

व्याड़ी और इन्द्रदत्त ने वसुदत्ता को अपना वृत्तान्त सुनाया—"यदि आपने अपने लड़के को कृपा करके हमारे साथ भेजा, तो हम वर्ष उपध्याय के पास सब विद्यायें सीख सकेंगे। हम पर कृपा कीजिये।"

"अच्छा भाई, इसको साथ ले जाओ और इसको अपने भाई की तरह देखना।" वसुदत्ता ने कहा।

वे तीनों फिर पाटलीपुत्र गये। वर्ष से मिले। उन्होंने उससे सब विद्यायें सिखाने की प्रार्थना की। वररुचि को देखते ही वह उनका गुरु होने के लिए मान गया। गुरु के मुख से वररुचि एक बार वेद सुनता और तुरत उसे फिर सुना देता। उन दोनों के सुनाने पर, व्याड़ी को याद हो जाता और तीनों का सुनकर इन्द्रदत्त भी याद कर लेता। यह वर्ष उपाध्याय, जिसको परम मूर्ख समझा जाता था, उसके बुद्धिमान शिष्यों को देखकर सारा नगर उस पर चकित होने लगा। उसकी प्रसिद्धि नगर में सर्वत्र फैल गई। सिवाय उसके भाई उपवर्ष के बाकी सब उसको देवता की भाँति देखने लगे। आखिर उस नगर के परिपालक नन्द ने भी उसको सुवर्ण के उपहार दिये।

उन शिष्यों का विद्याभ्यास समाप्त हो गया था, पर वे गुरु को छोड़कर न गये। इस समय नगर में इन्द्रोत्सव हुआ। उत्सव देखने तीनों मित्र गये। उनको वहाँ रति-सी सुन्दर कोई युवती दिखाई दी। उसके साथ उसकी सहेलियाँ भी थीं।

एक दूसरे को देखकर वररुचि और युवती आपस में प्रेम करने लगे। जब

वररुचि ने पूछा कि वह कौन थी, तो इन्द्रदत्त ने बताया—"हमारे गुरु के जो भाई हैं न उपवर्ष, उनकी लड़की उपकोश।" इसी तरह उपकोश ने भी अपनी सहेलियों द्वारा वररुचि के बारे में मालूम किया। उस दिन रात को वररुचि ठीक सो न सका। सवेरे उठते ही वह उपवर्ष के घर के सामने एक आम के पेड़ के नीचे बैठ गया।

उसके पास उपकोश की सहेली ने आकर बताया कि उपकोश उसको बहुत प्रेम कर रही थी। वररुचि ने उससे कहा—"यदि मेरी इच्छा पूरी होनी है तो एक ही मार्ग है। वह यह है कि माता-पिता की अनुमति पर हम दोनों का विवाह हो। नहीं तो हम दोनों के प्राण चले जायेंगे। हमारे प्राणों की जैसे भी हो रक्षा करो।"

तुरत जाकर उसने यह बात उपकोश की माँ से कहा। उसने यह अपने पति को बताया। उपवर्ष ने अपने भाई वर्ष से परामर्श किया। वररुचि और उपकोश का विवाह निश्चित हुआ। व्याड़ी कौशाम्बी जाकर वररुचि की माँ वसुदत्ता को बुला लाया। वररुचि उपकोश विवाह करके पत्नी और माँ के साथ पाटलीपुत्र में ही गृहस्थी चलाने लगा।
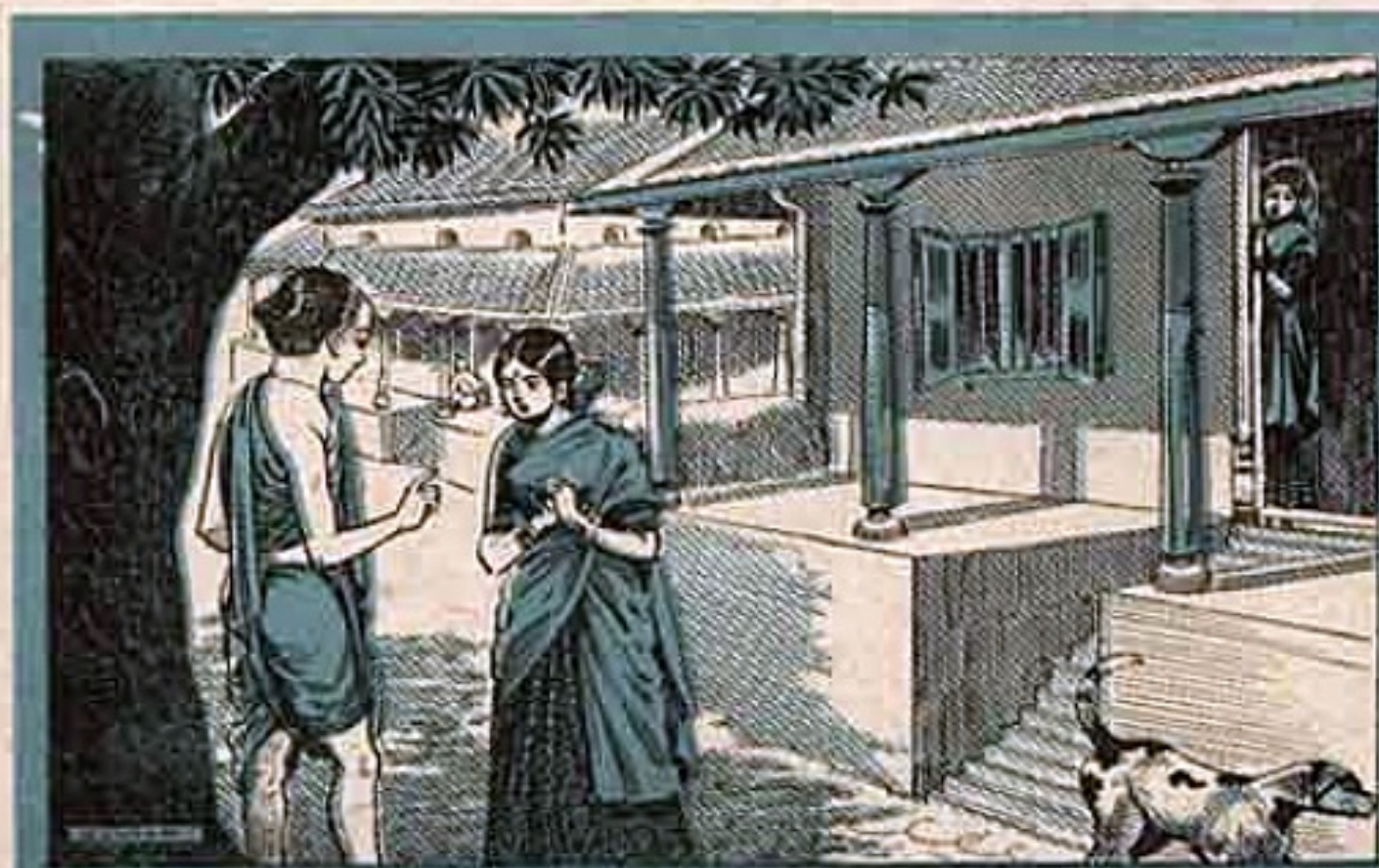
तब तक प्रचलित था, लुप्त हो गया। फिर वररुचि हिमालय गया। वहाँ उसने शंकर की तपस्या की। उसने भी व्याकरण पाया। उसने उसे वर्ष उपाध्याय को सुनाया भी।

व्याड़ी और इन्द्रदत्त ने गुरु को छोड़कर जाना चाहा। उन्होंने गुरु से दक्षिणा के बारे में पूछा। वर्ष ने करोड़ वराह माँगे। उन दोनों ने वररुचि के पास जाकर कहा—"गुरु ने करोड़ वराह माँगे हैं। उतना धन तो केवल नन्द महाराजा ही दे सकते हैं। वे अयोध्या के नन्दकटक में हैं। आओ, उनके पास जाकर यह माँगे।"

वर्ष की शिष्य परम्परा बढ़ती जाती थी। उन शिष्यों में पाणिनी नाम का एक मूर्ख था। यह सोच कि वह पढ़ नहीं पायेगा, वर्ष की पत्नी ने उसे भेज दिया था। पाणिनी सीधे हिमालय गया। उसने कठोर तपस्या की। शंकर को सन्तुष्ट कर उसने उनसे एक नया व्याकरण पाया। उसने वापिस आकर सबसे अधिक बुद्धिमान वररुचि को वादविवाद के लिए निमन्त्रित किया। आठ दिन तक विवाद चलता रहा। फिर वररुचि पाणिनी द्वारा हरा दिया गया। उसके बाद जो ऐन्द्र व्याकरण

तीनों मिलकर जब नन्दकटक गये, तो मालूम हुआ कि कुछ देर पहिले ही नन्द महाराजा मर गये थे। प्रजा दुःखी थी।

पर इन्द्रदत्त को एक बात सूझी। वह योग जानता था। उसने अपने मित्रों से कहा—"देखो, मैं राजा के शरीर में प्रविष्ट होऊँगा। व्याड़ी मेरे देह की रक्षा करता यहीं रहेगा। वररुचि तुम आकर मुझसे धन माँगो, मैं दे दूँगा। तब हमारा काम पूरा हो जायेगा।"

जब बाकी दोनों मान गये तो इन्द्रदत्त ने एक उजड़े मन्दिर में अपना शरीर छोड़

दिया और वह मृत नन्द के शरीर में प्रविष्ट कर गया। व्याड़ी, इन्द्रदत्त के शरीर की रक्षा करता, उस आलय में ही रह गया।

मृत राजा जब पुनर्जीवित हो गया, तो प्रजा के आनन्द की सीमा न रही। उन्होंने उत्सव मनाये। वररुचि उस समय राजा के पास गया। उसने राजा को आशीर्वाद देकर, करोड़ वराह माँगे। नन्द ने अपने मन्त्री शकटाल को बुलाकर कहा—"इस ब्राह्मण युवक को करोड़ वराह दे दो।

शकटाल बड़ा तेज़ था। उसे तो इस पर भी आश्चर्य था कि मृत राजा जीवित हो उठा था—फिर इतने में किसी का आकर करोड़ वराह माँगना और राजा का इतनी बड़ी रकम दे देना देखकर शकटाल ने सन्देह किया कि किसी योगी ने राजा के शरीर में प्रवेश कर रखा है। योगी का शरीर यहीं कहीं होगा। यह सोचकर शकटाल ने अपने सेवक से कहा—"देश में जो कोई शव मिले, उसे जला दो।" उन्होंने उजड़े हुए देवालय में इन्द्रदत्त का शरीर देखा। व्याड़ी ने जब उनको रोका तो उसको उन्होंने धकेल दिया और उस शरीर को उन्होंने जला दिया।

और उधर नन्द शकटाल से पूछ रहा था—"तुमने इस युवक को धन दिया कि नहीं?"

"महाराज, लोग उत्सव मना रहे हैं। इसलिए मैं थोड़ी देर बाद दे दूँगा।" शकटाल ने कहा।

इतने में व्याड़ी भागा भागा आया—"महाराज! आपके शासन में आपके सैनिकों ने भयंकर काम कर दिया है। एक ब्राह्मण युवक को, जो योग समाधि में था, शव बताकर उन्होंने जला दिया है।" उसने कहा। नन्द के शरीर में स्थित

इन्द्रदत्त को सच मालूम हो गया कि राज सेवकों ने उसके शरीर को ही जलाया था।

फिर उसने व्याड़ी से एकान्त में बातचीत की। उसने जो कुछ बीता था, उस पर चिन्ता प्रकट की। व्याड़ी ने उस से कहा—"जो कुछ हो गया है, उस पर कुछ नहीं किया जा सकता। मगर शकटाल को देखते रहना। यह बड़ा उद्दण्ड है। तेरा नाश करके पहिले नन्द के लड़के चन्द्रगुप्त को वह गद्दी पर बिठा सकता है। इसलिए वररुचि को प्रधान मन्त्री बना लो।"

उस नन्द ने वररुचि को उसके कहे अनुसार प्रधान मन्त्री नियुक्त कर दिया। परन्तु राजा में धीमे धीमे परिवर्तन होने लगा। पहिले तो इन्द्रदत्त को न भाया कि वह राजा के शरीर में आ गया था, फिर वह भी भोग-विलासों का आदि हो गया। उसमें दुर्बुद्धि आ गई। वररुचि पर उसका स्नेह भी क्रमेण कम होता गया। अन्त में राजा उस पर सन्देह भी करने लगा। जब वररुचि को मालूम हुआ कि राजा उसे मरवाना चाहता था, तो वह शकटाल के घर प्राण बचाने के लिए छुप गया।

नगर में अफवाह उड़ी कि राजा ने वररुचि को मरवा दिया है। यह सुनते ही उपकोश ने अग्नि में प्रवेश किया। वसुदत्ता हृदय शोक में फूट पड़ा और वह भी मर गई, इसके कुछ दिनों बाद चाणक्य नाम का ब्राह्मण राजा नन्द पर क्रुद्ध हो उठा और उसने सात दिनों में राजा को मरवा दिया। चन्द्रगुप्त को उसने गद्दी पर बिठाया।

वररुचि जीवन से विरक्त हो उठा। वन में जाकर तपस्या करके उसने अपना देह छोड़ दिया।

[९]

मार्कोपोलो १३ वीं शताब्दी के अन्तिम दशक में भारत आया। यहाँ वह कुछ दिन रहा। उसने बहुत-सी बातें यहाँ देखीं, जिनको उसने अपने ग्रन्थ में लिखा भी। इन बातों से ही हम उसकी यात्रा की कथा समाप्त कर रहे हैं।

सिंहल देश से ६० मील समुद्र में यात्रा करने के बाद माबार (चोल) देश आता है। इस देश में पाँच स्वतन्त्र राजा राज्य किया करते थे। माबार और सिंहल द्वीप के बीच जो खाड़ी थी, उसमें मोतियाँ मिला करती थीं। संसार में उपलब्ध अच्छी मोतियाँ यहाँ निकाली गई थीं। यहाँ समुद्र खास गहरा नहीं है। कुछ व्यापारी मिल-मिलाकर एक नाव लेकर यहाँ आया करते। यहाँ इस प्रकार की बहुत-सी नौकायें आती हैं। एप्रिल और मई के पहिले आधे भाग में मोतियाँ निकाली जातीं। समुद्र में से मोतियों के सीपों को निकालनेवालों को वेतन पर रखा जाता। ये पानी में डूबते, तह से सीप निकाल कर लाते और व्यापारियों को देते। सीपों में छोटी-बड़ी तरह तरह की मोतियाँ होती हैं। मोतियों की सीपों को अच्छे पानी में रखने से माँस ऊपर आ जाता और मोतियाँ

होता। उनका मूल्य निश्चित करना असम्भव था। उनसे एक महानगर खरीदा जा सकता था। उसकी आज्ञा थी कि बहुमूल्य रत्न राज्य से बाहर न ले जाये जायें।"

"इस देश में घोड़े नहीं पाले जाते। इसलिए बहुत-सा रुपया खर्च करके अरब देश से घोड़े मँगाये जाते हैं। इस देश में पति के मर जाने पर पत्नी भी उसके साथ चिता में जल जाती है। इस तरह करनेवाली स्त्रियाँ उत्तम समझी जाती हैं। यहाँ भोजन करनेवाले केवल दायें हाथ का ही उपयोग करते हैं, पीते समय पात्र को मुख पर नहीं लगने देते।"

नीचे चली जातीं। इस तरह व्यापारी असंख्य मोतियाँ जमा कर लेते। ताकि समुद्र में डूबनेवालों को कोई समुद्र प्राणी खा न ले इसलिए ब्राह्मण मन्त्र पढ़ा करते। इस काम के लिए ब्राह्मणों को सौ मोतियों में पाँच मोती मिला करतीं।

"माबार में दर्जी नहीं हैं। क्योंकि वह गरम देश है, इसलिए यहाँ के निवासी वस्त्र नहीं पहिनते, केवल अंगवस्त्र का ही उपयोग करते हैं। राजा भी केवल अंगवस्त्र ही पहिना करता। परन्तु उसके किनारों पर रत्न होते। इसलिए उनका मूल्य बहुत

"कर्ज़ देनेवालों का कर्ज़ वापिस न दिया जाता, तो कर्ज़दार के चारों ओर वे एक लकीर खींच देते और वह व्यक्ति तब तक उस लकीर को नहीं पार कर सकता था, जब तक वह कर्ज़ न चुका देता था। अगर कोई लकीर पार भी करता तो उसको मृत्यु दण्ड दिया जाता। राजा को ही यह भुगतते मार्को ने स्वयं अपनी आँखों देखा था।

राजा ने एक बिदेशी व्यापारी से कर्ज़ लिया। वह ठीक समय पर कर्ज़ न चुका

पाया। राजा जब घोड़े पर आ रहा था, तो उस व्यापारी ने उसके घोड़े के चारों ओर लकीर खींच दी। जब तक राजा ने रुपया मँगवाकर, उस व्यापारी को दे न दिया, तब तक उसने लकीर न पार की।

"यहाँ शकुनों का बड़ा पक्का रिवाज़ है। मुख्यतया जो यात्रा पर जाते थे कई तरह के शकुन देखते हैं। अगर आनेवाले के जाते समय कोई छींक देता तो वह तुरत रुक जाता। जब तक दूसरी छींक की आवाज न सुन लेता, तो वह न उठता। राहुकाल में कुछ भी न किया जाता। यह राहुकाल हर रोज भिन्न भिन्न समय पर आता है। यहाँ घरों में छिपकलियाँ होती हैं, छिपकलियों की आवाजों के भी बहुत-से अर्थ हैं।"

मार्कोपोलो १२९० में मोटपल्ली बन्दरगाह में उतरा। उस समय आन्ध्र में रुद्रमदेवी का शासन था। उसके बारे में मार्कोपोलो ने यह लिखा है।

"इस देश की रानी बहुत ही ज्ञानी है। इसके पति के मरे हुए ५० वर्ष हो गये हैं। इसने फिर विवाह नहीं किया। चालीस वर्ष इसने पति की तरह धर्म और न्याय के साथ शासन किया। प्रजा को जो उस पर आदर था, वैसा आदर सम्भवतः किसी भी राजा या रानी के प्रति नहीं दिखाया जाता।"

इस राज्य में हीरे मिलते हैं। जब पहाड़ों पर वर्षा होती है, तो नाले बहते हैं। उन नालों में पत्थरों के साथ हीरे भी बहते आते हैं। संसार में यहाँ ही हीरे मिलते हैं। बढ़िया हीरे यहाँ से बड़े खान और राजा महाराजाओं के पास जाते हैं, क्योंकि साधारण व्यक्ति तो इनको खरीद न सकते थे। संसार में सब से अच्छे

दुशाले यहाँ बनते थे। इसको पहिनने के लिए महाराजा, महारानी ललचाया करते। यहाँ पशु-सम्पदा अधिक है। यहाँ जितनी बड़ी भेड़ें हैं, संसार में और कहीं नहीं हैं।

"इस देश में लाड नाम का एक राज्य है। यहाँ ही वैश्य पैदा होते हैं। संसार में इनसे अच्छे विश्वासपात्र व्यापारी कहीं नहीं हैं। जब विदेशों से व्यापारी आते हैं, तो उनका माल लेकर वे ठीक दाम पर बेचते हैं और उनका पैसा उनको बकायदा उनको दे देते हैं, भले ही वे इस देश के रीति रिवाज़ व तौर तरीके न जानते हों। वे इस काम के लिए पारिश्रमिक की भी आशा नहीं करते, जो कोई कृतज्ञतापूर्वक देता है उसे स्वीकार कर लेते हैं। ये माँस नहीं खाते। शराब नहीं पीते। हिंसा नहीं करते। उसको पाप मानते हैं। ये चोल देश से अच्छे मोती लाकर अपने राजा को बेचते हैं। जो दाम उन्होंने खुद दिया था राजा को बताते, राजा ठीक दुगना उनको देता।

भारत देश में सब पान खाते हैं। कुलीनों में तो यह आदत और भी है। पान में वे चूने के साथ कपूर आदि चीज़ों का भी सेवन करते हैं।

भारत का आखिरी राज्य नेच-मक्रान है। यहाँ मुस्लिम अधिक हैं। यहाँ धान के साथ गेहूँ भी अधिक पैदा होता है।

"माबार और इसके बीच देश पूर्वी महाद्वीप में सबसे अधिक उत्तम है। यहाँ के सब नगरों के बारे में कहना असम्भव है। (समाप्त)

प्रेयसी की हत्या

विक्रमार्क ने अपना हठ न छोड़ा। वह पेड़ के पास गया। पेड़ पर से शव उतारकर कन्धे पर डाल हमेशा की तरह चुपचाप श्मशान की ओर चल पड़ा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"मुझे नहीं मालूम तुम किस धर्म का पालन करते हुए आधी रात के समय यह शव ढोकर ले जा रहे हो, पर यह जान लो कि धर्म पर चलनेवालों को भी पछताना पड़ता है। यह दिखाने के लिए मैं तुम्हें सनत्कुमार की कहानी सुनाता हूँ, सुनो।" उसने यों कहानी सुनानी शुरु की।

किसी ज़माने में ब्रह्मपुत्र नदी के किनारे वन प्रान्त में एक राजा के यहां सनत्कुमार नाम का युवक काम किया करता था। उसे शिकार का बड़ा शौक था। इसलिए वह अक्सर जंगल में जाया करता, शेर आदि का शिकार किया करता।

जिस जंगल में सनत्कुमार शिकार खेलने जाया करता था, उसके पास ही एक सामन्त के कुछ ग्राम थे। उस सामन्त का नाम था वसुवर्मा। वसुवर्मा और सनत्कुमार दोनों मित्र थे। कभी कभी वे दोनों एक साथ शिकार खेलने आया करते थे। क्योंकि वसुवर्मा को बहुत-से राज्य-सम्बन्धी कार्य थे, इसलिए वह प्रायः साथ न आ पाता।

एक बार सनत्कुमार शिकार पर जाता भीलों के ग्राम के पास से गुज़रा। भील, वसुवर्मा के कुछ जंगलों को काटकर, खेत बनाकर बहुत दिनों से रह रहे थे।

सनत्कुमार को जंगल में एक भील कन्या दिखाई दी, जो भेड़ों को चरा रही थी। यद्यपि वह सभ्य न थी, पर उसका सौंदर्य देखकर सनत्कुमार को बड़ा आश्चर्य हुआ। वह एक जगह चुपचाप बैठी माला बना रही थी।

सनत्कुमार घोड़े से उतरा। उसके पास आकर उसने पूछा—"तुम्हारा नाम क्या है? तुम्हारा घर कहाँ है?" उस लड़की ने पहिले तो खुलकर बातचीत न की, क्योंकि वह राजकर्मचारी था। उन राजकर्मचारियों को तो भील मनुष्य भी न मानते थे। उनको हर तरह की दिक्कतें उन्हीं के कारण होती थीं।

परन्तु सनत्कुमार साधारण राजकर्मचारियों की तरह न था। वह बहुत ही अच्छा और दयालु लगा। इसलिए उसने जवाब दिया—"मेरा नाम नागिनी है और जो ये झोंपड़े दिखाई दे रहे हैं, वह ही हमारा गाँव है।"

उसने सनत्कुमार को और भी कई बातें बताईं। अपने घर की कठिनाइयाँ भी बताईं, अपने गाँव के कष्टों की भी चर्चा की।

"तुम तो बहुत छोटी हो, तुम क्यों गाँव की कठिनाइयों के बारे में फ़िक्र करती हो!" सनत्कुमार ने पूछा। पर नागिनी ने कोई जवाब नहीं दिया।

इसके बाद सनत्कुमार जब जब मौका मिलता, भीलों के गाँव की ओर चला आता। उसका शिकार का भी शौक जाता रहा। नागिनी से गप्प करने और उसके सौन्दर्य को देखते रहने की उसकी आदत हो गई।

एक दिन नागिनी ने उससे कहा—"क्या यह सच है कि हमारा राजा हमारे खेत लेने की सोच रहा है! सुना है वे हमें जंगल में खदेड़ देंगे।"

"परन्तु तुम तो बहुत छोटी हो, क्यों तुम इन बातों पर माथापच्ची करती हो! बड़े बुर्ज़ुर्ग मर्द यह सब देख लेंगे।" सनत्कुमार ने कहा।

"हम दादा परदादाओं के ज़माने से यहीं रहते आये हैं। अगर अब राजा हमारे खेत ले लें, गौ भैंसे ले लें, और हमें शेरों के साथ जंगल में रहने के लिए कहें, तो क्या मैं चिन्तित नहीं होऊँगी।" नागिनी ने जोश में कहा।

सनत्कुमार ने उसकी ओर आश्चर्यपूर्वक देखा। नागिनी कोई साधारण किसान लड़की न थी। उस समय तक तो वह उसे जानता ही था, तब से वह उसे प्रेम भी करने लगा। उसने नागिनी का हाथ पकड़कर कहा—"नागिनी! मैं तुमको प्रेम करता हूँ।"

नागिनी ने अपना हाथ छुड़ाया और झट वह वहाँ से चली गई। सनत्कुमार को लगा कि उसे उसकी बात पर गुस्सा आ गया था। दो चार दिन तक वह उसको फिर देखने की हिम्मत न कर सका। जंगल में भी न गया।

यह काम उसके लिए अग्निपरीक्षा के समान होगा, उसने स्वप्न में भी कल्पना न की थी। केवल वह यह सोच सन्तुष्ट हुआ कि उसे नागिनी को देखने का मौका मिल रहा था।

भीलों में वसुवर्मा के समर्थक भी दो थे। भीलों ने एक झोंपड़े में ग्राम के अधिकारियों और उन दोनों भीलों को बन्द करके झोंपड़ी को आग लगा दी। उनकी रक्षा के लिए सनत्कुमार को वहाँ जाना पड़ा। सौभाग्यवश जो झोंपड़ी में कैद किये गये थे, वे जीवित निकल आये।

इतने में राज्य के कार्य पर सनत्कुमार को किसी और देश जाना पड़ा। वहाँ तीन मास रहने के बाद फिर बुलावा आया। उसने वापिस आकर जाना कि उसे एक नया काम सौंपा गया था।

वह यह था कि भीलों ने वसुवर्मा के विरुद्ध विद्रोह कर दिया था। उन्होंने वसुवर्मा को खेत देने से इनकार कर दिया और युद्ध करने का निश्चय किया। वसुवर्मा की सहायता के लिए कुछ सैनिक भेजे जा रहे थे। उनका नेता सनत्कुमार नियुक्त किया गया।

इसके बाद सनत्कुमार को उस गाँव में कोई काम न रहा। क्योंकि सब भील गाँव छोड़कर, स्त्रियों और बच्चों को लेकर अपने खेतों में चले गये थे।

सनत्कुमार सैनिकों के साथ भीलों की रहने की जगह गया। वे शोर शराबा कर रहे थे। तालियाँ बजा रहे थे।

हर किसी के हाथ में कोई न कोई हथियार था। आखिर बच्चों के हाथ में भी लाठी डंडे वगैरह थे। सैनिकों को देखते ही भील चुप हो गये। सनत्कुमार ने उनसे कहा—"तुम बिना कारण विद्रोह न

करो। दो आदमियों को तुमने जलाकर मारना चाहा। कम से कम अब यह गड़बड़ खतम करके अपने काम पर चले जाओ।"

"यह सब नहीं होगा। वे ही सचमुच द्रोही हैं, स्वयं अच्छी जमीन हथियाकर हमारे साथ अन्याय करने की सोची। यह जमीन हमारी है। हम यहीं मर जायेंगे पर इसको छोड़कर न जायेंगे।" भीलों ने कहा।

सनत्कुमार ने नागिनी को खोजते हुए इधर-उधर देखा। परन्तु वह कहीं न दिखाई दी। उसने अपने सैनिकों को आज्ञा दी कि वे भीलों पर बाण छोड़े। जब कुछ भील बाण की चोट खाकर गिर गये, तो बाकी तितर-बितर हो गये।

इतने में एक स्त्री ने एक टीले पर खड़े होकर कहा—"ठहरो, क्या तुम मर्द नहीं हो! अपने खेतों की क्या इस तरह रक्षा की जाती है! दो बाण क्या तुम पर पड़े कि डरपोकों की तरह भागे जा रहे हो!"

भागनेवाले फिर वापिस आये। सनत्कुमार उस स्त्री को पहिचान गया। वह नागिनी ही थी। उसकी अक्ल जाती रही। इस

युद्ध में एक तरफ़ यदि वह नेता था, तो दूसरी ओर नागिनी थी।

अब सब भील नागिनी के नेतृत्व में लड़ने लगे। सैनिकों पर पत्थर, भाले आदि फेंकने लगे। "लड़ो" अपने सैनिकों से यह कहने की जिम्मेवारी सनत्कुमार पर थी। उसने अपने सैनिकों को यह आज्ञा दी।

थोड़ी देर में उसने देखा कि नागिनी के हृदय में बाण लगा और वह गिर गई। वह पगला-सा गया। वह भागा-भागा गया और उसका सिर अपनी गोदी में रखकर रोने लगा। नागिनी ने आँखें

खोली और उसको देखते-देखते उसने प्राण छोड़ दिये। सनत्कुमार जान गया कि वह अत्याचारियों की तरफ़ से लड़ते लड़ते अपनी प्रेयसी का हत्यारा हो गया था। उसे वैराग्य हो गया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर पूछा—"राजा, मुझे एक सन्देह है। सनत्कुमार ने नागिनी को क्यों मारा? इसलिए कि वह उसे प्रेम न करता था या इसलिए कि वह न जानता था कि पाप उसकी तरफ़ था। भले ही वह उससे प्रेम न कर रहा हो, अगर उसे यह भी मालूम होता कि वह अन्याय का समर्थन कर रहा था, तो भी वह हत्यारा न बनता, वह यह नागिनी की मृत्यु से पहिले क्यों नहीं जान सका? अगर तुमने इन प्रश्नों का जान-बूझकर उत्तर न दिया, तो तुम्हारा सिर टुकड़े टुकड़े हो जायेगा।"

विक्रमार्क ने कहा—"व्यक्तियों का धर्म, समाज द्वारा निर्णीत होता है। सनत्कुमार अत्याचारियों की तरफ़ था। इसलिए उसने उनके धर्म का ही अवलम्बन किया। क्योंकि उसको नागिनी पर सचमुच प्रेम था, इसलिए उसके प्रेम और धर्म में संघर्षण हुआ। इस संघर्षण में हमेशा समाज की ही विजय होती है। इसलिए सनत्कुमार के धर्म ने प्रेम पर विजय पाई और वह अपनी प्रेयसी का हत्यारा बना। पर ज्योंहि उसने उस धर्म पर अपने प्रेम की बलि दे दी, त्योंहि उसे वास्तविक ज्ञान हुआ। उसे पता लगा कि सच्चा धर्म नागिनी की तरफ़ ही था।"

राजा का इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य हो गया और वृक्ष पर जा बैठा।

(कल्पित)

[गतांक से आगे]

यह बात फैल गई कि आलसी नाग से बढ़कर कोई चोर न था। सूचो सैनिक शिबिर के नायक चान्ग ने उसको बुलाकर पूछा—"तुम चोरों में प्रवीण हो न?"

"जी नहीं, मैं तो चोर ही नहीं हूँ, फिर चोरों में प्रवीण कैसे होऊँगा! मुझे किसी ने कभी चोरी करते नहीं देखा, कभी किसी ने मुझे सजा नहीं दी। हाँ मैं कुछ विद्यायें जानता हूँ। उनको दिखाकर मैं मित्रों का मनोरंजन करता हूँ। फिर भी यदि आपको कोई काम हो तो बताइये। अगर आप आग में कूदने के लिए कहें या पानी में मैं कूदने के लिए मैं तैयार हूँ।" आलसी नाग ने कहा।

यह सुन चान्ग सन्तुष्ट हुआ। चोर को पकड़ने की माथापची की अपेक्षा उससे सहायता पाना ही उसका अच्छा लगा। उसने आलसी नाग से कहा—"मुझे मालूम है, तुमने बहुत जगह चोरी की है। मैं तुम्हें सजा नहीं दूँगा, पर मैं हुनर देखना चाहता हूँ। आज रात इस तोते को चुराओ और कल सवेरे तक मुझे इसे लाकर दे दो।"

आलसी नाग ने इसको मानते हुए सिर झुकाया और विदा लेकर चला गया।

नायक चान्ग ने तोते के पिंजरे पर दो आदमियों को पहरे पर रखा—"रात भर इसकी रखवाली करो। अगर कोई लापरवाही की तो तुम्हारा चमड़ा निकलवा दूँगा, खबरदार।" दोनों आदमियों ने रतजगा करके तोते की रखवाली की। सवेरा होने से पहिले आलसी नाग चान्ग के कमरे की छत में छेद करके अन्दर

वेदवती

आया। उस कमरे में उसको उसका दुशाला, टोपी, उसकी लालटेन वगैरह दिखाई दीं। उसे तुरत एक ख्याल आया। उसने टोपी पहिन ली, दुशाला ओढ़कर, लालटेन जलाकर बूढ़े चान्ग की तरह इस प्रकार लालटेन पकड़कर आया, ताकि उसके मुँह पर प्रकाश न पड़े। पहरेदारों के पास जाकर उसने चान्ग की आवाज़ में, लहजे में कहा—"सवेरा हो रहा है, पहरा काफ़ी है। जाओ।" यह कहते हुए उसने हाथ बढ़ाया, तोता पकड़ा और पासवाले कमरे में चला गया।

पहरेवालों की तो तभी नींद के मारे बुरी हालत हो रही थी उनको यह सन्देह भी न हुआ कि जो आदमी वहाँ आया था, वह चान्ग न था। उसके "जाओ" कहने की देर थी कि वे जाकर सो गये।

सवेरा होते ही चान्ग उस तरफ़ आया। यह देख कि तोता नहीं है, उसने पहरेवालों को बुलाया। पर वे न बोले। नौकर उनको उठाकर लाये।

"तोता कहाँ है? तुम पहरा छोड़कर क्यों सो रहे हो?" चान्ग ने उनसे पूछा।

"आपने तोता अन्दर ले जाते हुए हमें जाने के लिए जो कहा था।" उन्होंने कहा।

"क्या कह रहे हो! मैं कब बाहर आया! कहीं तुम्हें कोई भूत तो नहीं दिखाई दे गया था।" चान्ग ने पूछा।

"हम दोनों भला कैसे गल्ती कर सकते हैं?" उन्होंने पूछा।

उसने सारा घर छाना। जब उसने अपने कमरे की छत में छेद पाया तो वह जान गया यह आलसी नाग की ही करतूत थी। थोड़ी देर में स्वयं आलसी नाग ने लाकर तोता दिया और यह भी बताया कि

वह उसे कैसे उड़ा ले गया था। चान्ग खुश हुआ। उसको उसने अभय का आश्वासन दिया। आलसी नाग ने उसके बदले में उसको बहुत से ईनाम दिये।

* * *

एक जुआखोर हज़ार तोला चान्दी जुए में जीतकर घर आ रहा था कि उसे आलसी नाग दिखाई दिया। उसने आलसी नाग से कहा—"आज यह धन तकिये के नीचे रखकर मैं सोने जा रहा हूँ। अगर तुम इसे चुरा सके तो मैं तुम्हें दावत दूँगा। अगर न ले सके तो तुम मुझे दावत दोगे, मानते हो शर्त?"

आलसी नाग शर्त मान गया।

जुआखोर ने घर जाकर पत्नी को बताया कि वह बहुत-सा धन जीत कर लाया था। उसने खुश होकर मुरगी बनाकर खाने में दी। उस दिन दोनों ने खूब खाया और खाने से जो बच गया, उसको रसोई में ही रख दिया। जब वे सोने लगे, तो पति ने पत्नी को यह शर्त भी बताई, जो उसने आलसी नाग से की थी। दोनों ने एक दूसरे से कहा कि जागते रहना होगा। उनकी बातचीत बाहर आलसी नाग सुन रहा था।

अगर पति-पत्नी जागते रहे तो उसके लिए चोरी करना सम्भव न था। इसलिए उसने एक तरीका सोचा। वह रसोई में घुस गया और ऐसी ध्वनि करने लगा, जैसे कुछ काटकर खा रहा हो।

पत्नी यह आहट सुनकर झट उठी—"लगता है, कम्बख्त बिल्ली बाकी मुरगी खा रही है।" कहकर वह पलंग पर से उतरी और रसोई की ओर भागी।

इतने में आलसी नाग रसोई में से भागा, आँगन में जाकर उसने कुएँ में धड़ाम से बड़ा-सा पत्थर फेंक दिया।

"अरी पगली कहीं की. कहीं आधी मुरगी के लिए कुएँ में तो नहीं गिर गई !" सोचता जुआखोर आँगन में गया। यही मौका देख आलसी नाग सोने के कमरे में गया और तकिये के नीचे धन लेकर चम्पत हुआ।

जल्दी ही पत्नी जान गई कि मुरगी किसी ने न छुई थी। जुआखोर भी जान गया कि उसकी पत्नी कुएँ में नहीं गिरी थी। पर जब दोनों पलंग के पास आये तो देखा कि तकिया हिला हुआ था और उसके नीचे धन की थैली न थी।

"दोनों के जागते रहने पर ही धन चला गया। इससे बड़ी शर्म की बात कुछ और हो सकती है !" दोनों ने सोचा।

सवेरा होते ही आलसी नाग ने पैसा लाकर दिया और जुआखोर से उसने कहा कि वह दावत खिलाये। जुआखोर ने आलसी नाग को किसी भोजनशाला भेजकर, खाने और पीने की चीज़ें मँगवाईं। दोनों भोजन करते हुए गुज़री रात की बात याद करके बहुत हँसे। भोजनशालावाले ने उनसे पूछा—"तुम किस बात पर हँस रहे हो !" उन्होंने जो कुछ गुज़रा था उससे कहा।

भोजनशालावाले ने आलसी नाग से कहा—"तुम्हारे बारे में बहुत-सी कहानियाँ सुनी हैं। परन्तु मैंने उनपर अभी तक विश्वास नहीं किया है। इस मेज़ पर तुम मदिरा पात्र देख रहे हो न? अगर तुमने इसे रात को गायब कर दिया तो मैं तुम्हें दावत दूँगा।"

आलसी नाग ने हँसकर कहा—"हाँ।"

"पर तुम मेरी खिड़कियाँ और किवाड़ न तोड़ना। सिर्फ़ इस पात्र को ही ले जाना होगा। देखें तुम्हारी होशियारी।" भोजनशालावाले ने कहा। "अच्छा, अच्छा" कहता आलसी नाग चला गया।

उस दिन भोजनशालावाले ने किवाड़ बन्द करवा दिये। यह जानकर कि आलसी नाग किसी भी रास्ते अन्दर नहीं आ सकता था, मेज़ पर एक दीया रखकर आधी रात तक उसने पात्र की रखवाली की। पर कुछ भी नहीं हुआ। इतने में उसे गाढ़ी नींद आने लगी। थोड़ी देर तो वह नींद रोकता रहा फिर मेज़ पर सिर रखकर खुर्राटे मारने लगा।

आलसी नाग बाहर से यह सब सुन रहा था, उसकी खुर्राटे सुनते ही, उसने चुपचाप छत पर से तीन चार खपरैल

हटाकर छेद किया। उसके पास एक लम्बा खोखला बाँस था। उसके अन्त में एक बेलन-सा उसने बाँधा। बाँस एक सिरे से, दूसरे सिरे तक खोखला था। छत के छेद से उसने बाँस नीचे इस तरह छोड़ा, ताकि बेलन उस पात्र में गिरे। उसने बाँस के दूसरे सिरे में फूँका। उस हवा से वह बेलन फूला। पात्र का मुख पतला था। इसलिए बेलन मुख पर अटक गया। बेलन के फूलते ही उसने बाँस का ऊपर का सिर बन्द किया और पात्र को ऊपर खींच लिया। बेलन के साथ पात्र भी ऊपर आ गया। उसने उसको लिया और पहिले की तरह खपरैल रख दिये और चला गया।

भोजनशाला का मालिक जब उठा, तो बेन्च पर रोशनी तो हो रही थी पर मदिरा पात्र वहाँ न था। किवाड़ खिड़की पहिले की तरह बन्द थे। पर मदिरा-पात्र इस तरह गायब हो गया था, जैसे किसी ने मन्त्र पढ़कर उसे उड़ा लिया हो।

* * *

एक गाँव में एक न्यायाधिकारी रहा करता था। उसके पास बहुत-सा धन था, जो उसने अन्याय करके जुटाया था। आलसी नाग के कई मित्रों ने उससे कहा, क्यों नहीं उसका वह धन कमकर देता! एक दिन वह रात को उस गाँव में पहुँचा। न्यायाधिकारी के खज़ाने में वह घुसा। छोटे से पीपे में उसने दो सौ तोला सोना रख लिया, यह दिखाने के लिए कि उसने चोरी की थी, उसने दीवार पर एक फूल का चित्र भी बना दिया। यह सब करके वह चलता हुआ।

दो तीन दिन बाद न्यायाधिकारी को पता लगा कि उसका सोने का पीपा

गायब था। उसने फूल का चित्र भी देखा। रक्षाधिकारियों से पूछा तो उन्होंने बताया कि वह "आलसी नाग" का निशान था।

"तो उसको तुरत पकड़कर लाओ।" न्यायाधिकारी ने कहा। "हुज़ूर, आप उसको नहीं जानते। उसको पकड़ना खतरनाक है। चुपचाप रह जाने में ही भला है।" रक्षाधिकारियों ने कहा।

न्यायाधिकारी ने झुंझलाकर कहा—"तुम क्या चोरों से मिले जुले हो! तुम को फाँसी पर चढ़ा दूँगा।" उसने उनको डराया। रक्षाधिकारी भी क्या करते। सूचौ नगर में जाकर, पश्चिम के द्वार के पास वे आलसी नाग से मिले और जो कुछ हुआ था उसे बता दिया। "वह सोना मेरे पास नहीं है। मैंने उसे तुम्हारे घर के आँगनों में गाड़ दिया था। आज रात तुम घर जाकर सोओ। मैं देख लूँगा कि कल से न्यायाधिकारी मुझे पकड़ने की कोशिश छोड़ देंगे।" उसने कहा।

वह उस दिन रात को फिर न्यायाधिकारी के घर गया। उसकी दो पत्नियाँ थीं। उनमें से एक पत्नी अकेली लेटी हुई थी। आलसी नाग ने उसके कुछ केश काटे

उनको न्यायाधिकारी की मुद्रा की पिटारी में रखकर, फिर दीवार पर फूल का चित्र बनाकर चला गया।

न्यायाधिकारी की पत्नी जब उठी और उसने देखा कि उसके बाल गले तक ही आरहे थे, वह ज़ोर से चिल्लाई। सब आये। न्यायाधिकारी को भी मालूम हुआ कि कोई घटना घट गई थी। "यह भी क्या बात है। चोर अभी तक नहीं मिलता है। इस बीच कोई और आकर मेरी पत्नी के बाल काट ले गया। मेरी मुद्रा की पिटारी तो लाओ।" उसने कहा।

था। इस तरह के आदमी से झगड़ा मोल लेना अक्लमन्दी नहीं है।" उसने सोचा।

वह मुचौ गया। रक्षाधिकारियों को बुलवाया। "तुम्हें आलसी नाग को पकड़ने की ज़रूरत नहीं है।" उन्होंने तब तक उनके आँगनों में आलसी नाग ने जो सोना छुपाया था, उसे पा लिया था। उन्होंने सोचा कि अच्छा हुआ कि उसे पिछले दिन न पकड़ा था।

* * *

एक और नगर में एक और अन्यायी न्यायाधिकारी रहा करता था। क्योंकि उसने बहुत से अन्याय किये थे इसलिए तहकीकात करने एक और कर्मचारी भेजा गया था।

इस न्यायाधिकारी ने आलसी नाग के पास बहुत-से उपहार भेजकर उसको बुलवाया। "आप मुझसे क्या मदद चाहते हैं!" आलसी नाग ने उससे पूछा।

"मेरे बारे में तहकीकात करने एक कर्मचारी आया हुआ है। अगर तुमने उसके अधिकार मुद्रा चुरा ली, तो उसकी नौकरी जाती रहेगी।" न्यायाधिकारी ने कहा।

"अच्छा, तो हुज़ूर, मैं उसको कल लाकर दे दूँगा।" आलसी नाग ने कहा।

मुद्रा की पिटारी में जो ताला लगाया गया था, वह लगा हुआ था। उसने पिटारी खोली तो अपनी मुद्रा को देख सन्तुष्ट हुआ कि वह चोरी न गई थी। परन्तु उसके नीचे केश देखकर उसको बड़ा आश्चर्य हुआ। उस समय उसने दीवार पर फूल देखा। न्यायाधिकारी को यह देख काठ मार गया—"तो क्या फिर यह वही है, जिसने पत्नी के बाल काटे हैं। अगर वह चाहता तो उसका सिर भी काट सकता था। जिसने उसके बाल लाकर मुद्रा की पिटारी में रखे हैं, वह मुद्रा भी उड़ा ले जा सकता

अगले दिन सवेरे उसने उस अधिकारी की मुद्रा चुराकर न्यायाधिकारी को लाकर दी। न्यायाधिकारी ने उसको सौ तोला चान्दी ईनाम में दी और कहा—"यह रहा तुम्हारा ईनाम, अब तुम जा सकते हो।" आलसी नाग गया नहीं। उसने पूछा—"आप इस मुद्रा से करना क्या चाहते हैं?"

"यह मुद्रा जब तक मेरे पास है, तब तक यह अधिकारी मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकता।" न्यायाधिकारी ने कहा।

"मेरी सलाह सुनिये। वह अधिकारी बड़ा अक़्लमन्द है। अगर आप उससे पटाना चाहते हैं, तो यह मुद्रा उसके पास भेजकर कहलाइये कि आपके सैनिकों को एक चोर के पास मिला है। मगर चोर बचकर भाग गया है।" आलसी नाग ने कहा।

"वाह वाह, यदि यह उसको वापिस दे दी गई, तो क्या वह मेरा कहा सुनेगा? तुम क्यों फ़िक्र करते हो? तुम जाओ।" न्यायाधिकारी ने कहा। आलसी नाग बिना कुछ कहे चला गया। जब उस कर्मचारी को पता लगा कि उसकी अधिकार मुद्रा नहीं थी, तो वह ताड़ गया कि यह चोरी उस न्यायाधिकारी ने ही करवाई थी।

उसने बहाना किया कि उसकी तबीयत ठीक न थी, उसने तहकीकात भी बन्द कर दी।

"मैं जानता हूँ, यह बीमारी भी क्या है!" न्यायाधिकारी मन ही मन हँसा। रोज बीत रहे थे। अगर कोई बड़ा कर्मचारी बीमार पड़े और वह न जाकर देखे तो अच्छा न होगा। इसलिए वह उस कर्मचारी को देखने गया।

अधिकारी ने न्यायाधिकारी को बहुत देर बिठाया, उसे बहुत-सी शराब पिला दी। उसके साथ काफ़ी देर तक गप्प मारी। इतने में नौकरों ने आकर कहा—"बा! रसोई में आग लग गई है।"

तुरत उस कर्मचारी ने अपनी मुद्रा की पिटारी न्यायाधिकारी को देते हुए कहा—"इसे फ़िलहाल अपने घर रखिये। आग बुझाने के लिए आदमी भेजिये।"

न्यायाधिकारी खाली पिटारी अपने घर ले गया। आदमियों ने आकर रसोई में लगी आग बुझा दी। कर्मचारी ने न्यायाधिकारी के पास खबर भिजवाई कि उसकी मुद्रा वह वापिस भेज दे, ताकि वह अदालत का काम शुरु कर सके।

यदि न्यायाधिकारी खाली पिटारी लाकर देता, तो उस पर यह दोषारोपण होता कि उसने मुद्रा चुरा ली थी। इसलिए उसने उस पिटारी में मुद्रा रखकर वापिस दे दी।

कुछ दिन सुनवाई करने के बाद वह कर्मचारी राजधानी वापिस गया। उसने अपने निवेदिका में लिखा कि उसके सब अपराध साबित हो गये थे। उसने उस सिलसिले में यह भी लिखा कि कैसे उसकी मुद्रा खो गई थी और कैसे वह फिर मिल गई थी।

न्यायाधिकारी को कठिन दण्ड मिला। क्योंकि उसने आलसी नाग की सलाह न मानी थी, इसलिए उसे भुगतना पड़ा।

गलीवर की यात्रायें

एक दिन मैंने माई से राजा के सिर का एक बाल माँग लिया, उससे एक अच्छा एक कंघा तैयार किया। एक एक बाल हमारी कंघी के दान्तों के बराबर था।

राजा के पुस्तकालय में, मेरे लिये पुस्तकें पढ़ने के लिए विशेष व्यवस्था की गई। एक पंक्ति पढ़ने के लिए सीढ़ी के एक छोर से दूसरे छोर जाना होता।

रानी के सिर के बाल लेकर, मैंने एक कुर्सी बुनली। क्योंकि मैं उनका आदर करता था। इसलिए मैं उस पर न बैठता।

क्योंकि मैं अपने देश में पियानो बजाता था, इसलिए साहस करके मैंने राजा का पियानो बजाया। दो बासों के सिरों पर चूहे का चमड़ा बाँधकर, उन्हें पियानो पर पीटता, इधर उधर भागता— एक तरह का संगीत सुनाता। कुछ आश्चर्य होता।

एक दिन राजा अपने परिवार के साथ समुद्र के तट पर पिकनिक के लिए गया। मुझे भी मेरे यात्रा के कमरे में बन्द कर दासी साथ ले गई। जल्दी ही हम समुद्र तट पर पहुँचे।

वहाँ मेरा कमरा यानि पेटी एक लड़के को सौंपकर दासी रानी के पास गई।

बहुत देर हो गई। वह लड़का दासी की बहुत देर इन्तज़ार करता रहा, फिर पेटी को नीचे रखकर वह कहीं चला गया।

मुझे अचानक ऐसा लगा, जैसे कोई तूफ़ान आ रहा हो फिर देखते देखते मेरा कमरा आकाश में उड़ने लगा।

फिर क्या देखता हूँ कि यकायक मेरा कमरा समुद्र में गिरा। क्योंकि वह अच्छी तरह बनाया गया था, इसलिए पानी अन्दर न गया।

किस्मत अच्छी रही तो कोई जहाज़वाला देखेगा ही, यह सोच मैंने अपना कुरता फाड़ झंडा बनाकर एक लकड़ी पर लगा दिया।
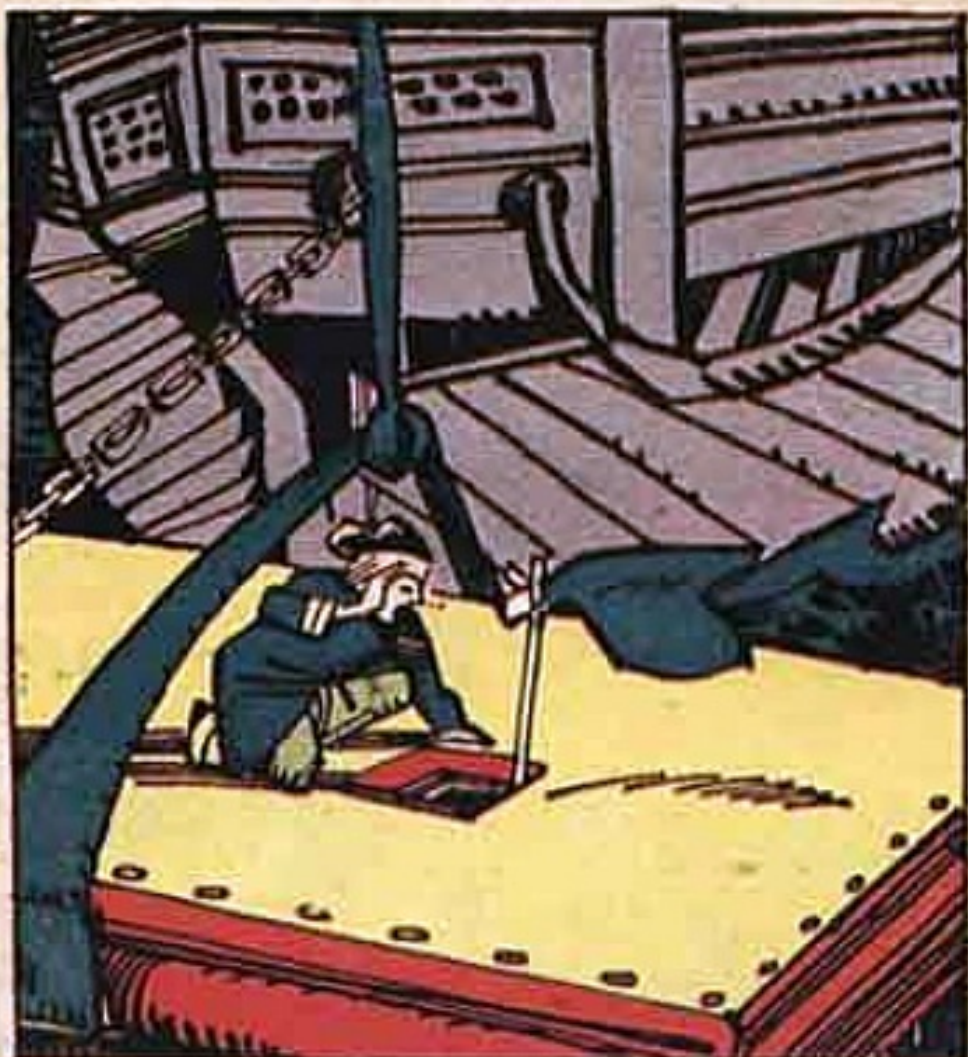
ऊपर के छेद से झंडे को बाहर करके मैं बैठ गया। इतने में किसी के मेरे कमरे के खींचने की आहट हुई।

हमारे देश के जहाज़वालों ने ही मेरा झंडा देखकर मुझे जहाज़ में खींचा। उन्होंने सोचा मुझे किसी सज़ा के लिए उस तरह बन्द किया गया था।

मैंने अपनी यात्राओं के बारे में बताया, तब भी उन्हें विश्वास नहीं हुआ। जब मैंने पहिये के बराबर रानी की अंगूठी और कंघियाँ आदि दिखाईं तब उन्हें विश्वास हुआ। मेरी आँखों ने जो पहाड़ से मनुष्यों को देखने की अभ्यस्त थीं, जब मनुष्यों को देखा।

ये सब मुझे तिनके से लगे। मुझे ऐसा लगा जैसे मैं बहुत ऊँचा हूँ और ये लीलीपुट से हैं।

उसी तरह बात करते समय भी आदतवश ज़ोर से चिल्लाता। मैं कई दिन तक साथ के आदमियों के साथ न रह सका।

जैसे भी हो, भगवान की दया से मैं सुरक्षित घर पहुँचा। पत्नी और बच्चों को देख पाया। मैंने अपने बच्चों को वचन दिया कि मैं फिर कभी उन्हें छोड़कर न जाऊँगा।

किसी ज़माने में टर्की देश में एक रईस रहा करता था। उसके एक ही लड़का था। उसकी विवाह के योग्य आयु हो गई थी। कई सम्बन्ध देखे गये, पर उसके माँ बाप को एक भी पसन्द न आया।

उस रईस के घर से थोड़ी दूर पर एक गरीब का घर था, वह रोज जंगल जाता, लकड़ियाँ काटता और उन्हें बेचकर अपना जीवन निर्वाह करता। इस गरीब की एक लड़की थी, उसकी उम्र भी शादी के लायक हो गई थी।

न मालूम क्यों एक दिन रईस की पत्नी इस गरीब के घर की ओर आई और उस लड़की का सौंदर्य देखकर मुग्ध-सी हो गई। उसने तुरत गरीब की पत्नी से कहा—"हमने अपने लड़के के विवाह के लिए बहुत-से सम्बन्ध देखे, पर एक भी न जँचा। तुम्हारी लड़की बड़ी सुन्दर है। अगर तुम मान जाओ तो हम इसको खुशी से बहु बना लेंगे।" गरीब की पत्नी को अपने कानों पर ही विश्वास न हुआ। उसने कहा—"सब खुदा की मेहरबानी है।" रईस की ने झट अपनी अंगुली से अंगूठी निकाली और गरीब की लड़की को पहिना दी, इस तरह सगाई की रस्म भी पूरी कर दी। वह इसके बाद घर चली गई। उसने अपने लड़के से कहा—"मैंने तुम्हारे लिए बड़ी खूबसूरत लड़की देखी है। जल्दी ही शादी का इन्तजाम करना है।"

"लकड़हारा शाम को घर आया। पत्नी ने बताया कि लड़की का रईस के लड़के के साथ विवाह तय हो गया है।" गरीब हैरान रह गया।

परन्तु यह शादी हुई नहीं। क्योंकि अड़ोस पड़ोस की स्त्रियों ने रईस की पत्नी से कहा—"यह भी क्या विवाह है! वह गरीब की लौंड़ी क्या तुम्हारे घर की इज़्ज़त रख सकेगी! क्या यह काफ़ी है कि लड़की खूबसूरत हो, खानदान, तौर तरीके भी तो देखने होते हैं।" ये बातें सुनकर रईस की पत्नी व्याकुल-सी हो उठी। वह जान गई कि उसने बड़ी गल्ती की थी। वह बिना किसी को बताये, जल्दी जल्दी गरीब के घर गई। गरीब की लड़की की अंगुली से अंगूठी निकालकर सीधे घर चली आई। सगाई इस तरह रद्द कर दी गई।

जब शाम को लकड़हारा घर आया तो पत्नी और लड़की बड़े दुःखी थे। गरीब ने कहा—"तुम रंज न करो, कल सवेरे मेरे साथ मस्जिद आओ। मस्जिद से कल जो कोई सब से पहिले निकलेगा, मैं उससे तेरी शादी कर दूँगा।"

सवेरा होते ही, गरीब ने लड़की को दुल्हिन बनाया। उसे मस्जिद ले गया। वे दोनों मस्जिद के दरवाजे के पास खड़े थे। थोड़ी देर बाद चीथड़े पहिना, एक बूढ़ा बाहर आया। गरीब ने जाकर बूढ़े का अभिवादन किया। उसे अपने निश्चय के बारे में बताया और कहा कि वह उसकी लड़की से विवाह कर ले।

"बेटा, मेरा तो कोई घरबार नहीं है। रोज दस पैसे नहीं कमा पाता हूँ। अगर तेरी लड़की से शादी कर ली तो मैं कैसे उसका भरण पोषण कर पाऊँगा।" बूढ़े ने कहा।

"मेरा निश्चय न तोड़िये। हम भी रईस नहीं हैं। हमें भी भूखे प्यासे सो जाने की आदत है।" लकड़हारे ने कहा।

"अच्छा, जैसी तुम्हारी मर्ज़ी" कहता बूढ़ा गरीब की लड़की को मस्जिद की पासवाली एक झोंपड़ी में ले गया और वहाँ साक्षियों के समक्ष उसने विवाह कर लिया। साक्षियों के आशीर्वाद देने के बाद लड़की को उस झोंपड़ी में अकेला छोड़कर सब चले गये। इसके बाद बूढ़ा रोज शाम झोंपड़े में आता, पत्नी को एक मोमबती और पाँच पैसे देकर चला जाता। उस पैसे से वह अपने लिए रोटी खरीद लेती और उसे खाकर, अकेली ज़िन्दगी गुज़ारने लगी। लेकिन गरीब की स्त्री अपनी लड़की की हालत पर लगातार रोती रहती। एक दिन गरीब अपनी पत्नी को लड़की के पास ले गया। अच्छा खानपान तो था नहीं, इसलिए लड़की बिल्कुल सूख गई थी। कपड़े भी चीथड़े हो गये थे। माँ ने उसके केश संवारे और उसको और कपड़े दिये, कपड़े होने को तो पुराने ही थे, पर अभी तार तार न हुए थे।

इधर रईस की लड़की के लिए एक और सम्बन्ध ढूँढा गया, मुहूर्त भी निश्चित किया गया। विवाह के दिन रईस की पत्नी ने गरीब की पत्नी की सहायता माँगी। उसने यह आकर अपनी लड़की से कहा और पूछा—"क्या तुम भी मेरे साथ आओगी?"

"मैं "उनसे" पूछूँगी, अगर वे मान गये तो आ जाऊँगी।" लड़की ने कहा।

जब शाम को बूढ़ा आया तो उसने उससे कहा—"मेरी माँ को रईस की घरवाली ने मदद के लिए बुलाया है। क्या मैं माँ के साथ जा सकती हूँ?"

"ज़रूर जाओ, यही नहीं, तुम्हें देखते ही दुल्हा, दुल्हिन को छोड़ देगा और

तुम से शादी कर लेगा। तुम इसके लिए भी मान जाओ।" बूढ़े ने कहा।

"छी, छी, अगर ऐसी बात है, तो मैं जाऊँगी ही नहीं।" लड़की ने कहा।

"तुम्हें क्या एतराज है! यहाँ तुम्हारे पास है ही क्या! वहाँ तुम्हें सब आराम मिलेंगे!" बूढ़े ने कहा।

"नहीं, मेरी किस्मत में तो ऐसी ज़िन्दगी ही लिखी है। अगर मैंने उस रईस से शादी कर भी ली तो वे लोग कंगाल हो जायेंगे। मैं अब जैसी हूँ, वैसी ही भली, मैं नहीं जाऊँगी।" पत्नी ने कहा।

"मैं तुम्हें जाने का हुक्म देती हूँ। समझे!" बूढ़ा यह कह चला गया।

अगले दिन सवेरे माँ उसके लिए अच्छे कपड़े और चप्पल वगैरह अड़ोस-पड़ोस की स्त्रियों से उधार लाई, लड़की को सजाया। वे जाने के लिए तैयार हो रही थीं कि घर के सामने एक गाड़ी खड़ी हुई। उसमें से दो स्त्रियाँ उतरीं और झोंपड़ी में आईं। उन्होंने उस लड़की के कपड़े उतार दिये और बढ़िया कपड़े उसे पहिनाये। उसे चम-चमाते गहने दिये। उसकी अंगुली में हीरेवाली अंगूठी पहिनाई। फिर वे उसकी और उसकी माँ को गाड़ी पर चढ़ाकर शादीवाले घर ले गये।

दुल्हिन को सब उपहार दे रहे थे। बूढ़े की पत्नी ने अपने हाथ की हीरे की अंगूठी दुल्हिन को दे दी। स्त्रियों ने उस लड़की को देखकर कानाफूसी की "यह कौन महारानी है!"

इतने में दुल्हिन को ले आने के लिए दुल्हा आया। लकड़हारे की लड़की को देखकर वह स्तब्ध-सा रह गया।

उसकी नज़र देखकर दुल्हिन खौल उठी। वह अपने बन्धुओं को लेकर तुरत

वहाँ से चली गई। लकड़हारे की लड़की को वे स्त्रियाँ जो उसको वहाँ लाई थीं, उसके झोंपड़े में ले गईं, उसके कपड़े और गहने सब उतार लिये और उसे मामूली कपड़े पहिनाकर, गाड़ी में चली गईं।

इस बीच दुल्हे ने अपने आदमियों को गाड़ी के पीछे भेजा। उसे मालूम हुआ कि जिस लड़की से वह प्रेम कर रहा था, उससे उसकी पहिले सगाई भी हो गई थी। उसने शपथ की—"मैं सिवाय उसके किसी और के साथ विवाह नहीं करूँगा।" उसने गरीब की लड़की के पास खबर भिजवाई कि वह उससे शादी करना चाहता था।

"मैं बूढ़े की पत्नी हूँ। इस जन्म में मेरी किस्मत इतनी ही है। इससे अधिक किस्मत नहीं चाहती।" उसने जवाब दिया।

यह जवाब सुनकर, रईस का लड़का झुंझला उठा। "मैं शादी करने के लिए कह रहा हूँ और यह मना कर रही है। मैं कौन हूँ और वह कौन है!" उसने जाकर सुल्तान से फरियाद की।

"तुम्हारी फरियाद कल सुनी जायेगी" सुल्तान ने खबर भिजवाई।

अगले दिन दरबार में हाज़िर होने के लिए लकड़हारे की लड़की के पास हुक्म आया। उसे मालूम न था कि वह क्यों बुलाई जा रही थी। इसलिए वह बड़ी घबराई। जब वह वहाँ पहुँची तो वहाँ उसको रईस का लड़का दिखाई दिया।

"इस लड़की की सगाई कभी मेरे साथ हुई थी। इसलिए मेहरबानी करके ऐसा फैसला दीजिये कि मैं इससे विवाह कर सकूँ। नहीं तो इसको फाँसी की सज़ा दीजिये।" रईस के लड़के ने परदे के पीछे सुल्तान से अर्ज़ किया।

"मैं इससे शादी नहीं करूँगी, चाहे तो आप मेरा गला कटवा दीजिये। मैं पहिले ही बूढ़े की पत्नी हो चुकी हूँ।" लकड़हारे की लड़की ने कहा।

"वह बूढ़ा कौन है?" सुल्तान ने परदे के पीछे से पूछा।

"मैं नहीं जानती। शाम के समय वह आता है और मुझे पाँच पैसे और एक मोमबत्ती देकर चला जाता है।" उसने कहा।

"उस गरीब के साथ मुसीबतें झेलना छोड़कर क्यों नहीं इस रईस से शादी कर लेती?" सुल्तान ने पूछा।

"मैं बूढ़े की पत्नी बनकर ही रहूँगी। वे ही मेरी किस्मत में हैं।" उसने कहा।

"अगर तुम्हें तुम्हारा पति दिखाई दे, तो क्या तुम उसे पहिचान सकोगी?" कहता सुल्तान परदे से बाहर आया, सुल्तान नौजवान था। फिर भी उसने उसको पहिचान लिया और कहा—"हुज़ूर, आप ही वह बूढ़े हैं। वह देखिये आपके गाल पर दाग़" लड़की ने कहा।

सुल्तान ने हँसकर कहा—"हाँ, मैं ही वह सुल्तान हूँ। तुम कहीं अचानक मिली थी, यह देखने के लिए कि तुम कैसी हो, मैंने इतनी परीक्षायें लीं। इसकी शादी के लिए, जो स्त्रियाँ तुम्हें सजाधजा कर ले गई थीं, उन्हें मैंने ही भेजा था। जितनी तुम खूबसूरत हो, उतनी ही तुम अच्छी भी हो।" उसने कहा।

उसने रईस की लड़की को जेल में डलवा दिया और भरे दरबार में उसने लकड़हारे की लड़की से फिर शादी की। चालीस दिन तक सारे मुल्क में दावतें होती रहीं।

बाबा भरी चान्दनी में आराम कुर्सी पर बैठा था। सुँघनी बाँयी हथेली में डालते हुए उसने एक श्लोक पढ़ा:

"मन्त्रः कार्यानुगो येषां
कार्यं स्वामि हितानुगं
त एव मन्त्रिणो राज्ञां
नतु ये गल पल्लवाः"

बाबा के चारों ओर बैठे हुए बच्चों ने पूछा—"बाबा यह क्या श्लोक है? इसका क्या अर्थ है?"

बाबा ने आराम से दायें हाथ की अंगुली में सुँघनी लेकर नाक में डाली। हाथ साफ़ करते हुए उसने पूछा—"जानना चाहते हो इस श्लोक का क्या अर्थ है? बताता हूँ। सुनो।"

जो मन्त्री है, उसे राजा के अनुकूल होकर काम करना चाहिये, जो ऐसा नहीं कर पाता वह मन्त्री ही नहीं है। यह इस का अर्थ है।"

"कौन राजा बाबा? और मन्त्री कौन? यह कथा सुनाओ बाबा!" हर बच्चे ने एक एक बात पूछी।

किसी ज़माने में चक्रपुर का सुदर्शन नाम का महाराजा था। उसका एक मन्त्री था। नाम था बुद्धिसिन्धु। यह मन्त्री बड़ा अक़्लमन्द था। इसलिए राजा तो उसकी प्रशंसा करता ही प्रजा भी उसकी प्रशंसा करती।

पर राजा को एक सनक थी। वह इधर उधर के ज्योतिषियों को बुलाकर भविष्य के बारे में मालूम करता रहता।

एक ज्योतिषी राजा के पास आया। उसने अपनी बुद्धिमता और चातुर्य के बारे में खूब बखाना।

राजा को भी वह पसन्द आया। उसने उस ज्योतिषी को अपनी कुण्डली दिखाकर पूछा—"क्या बता सकते हो अभी मेरी आयु कितनी और है?"

इस पर ज्योतिषी ने कहा—"महाराज, आज से छः मास बाद आपकी आयु समाप्त हो जायेगी। मैं कहने में कुछ छुपाता नहीं हूँ।"

यह सुन राजा चिन्ता के कारण व्यथित हो उठा। उसने खान पान छोड़ दिया। पलंग पकड़ी। "अरे छः महीने में मेरी जिन्दगी खतम हो जायेगी।" इसी फिक्र में वह सूखता गया।

मन्त्री को, जो यह सब देख रहा था, ज्योतिषी को देखकर गुस्सा आया। उसने राजा से कहा—"महाराज! आप ज्योतिषियों पर विश्वास न कीजिये। वशिष्ट जैसे ऋषि ने राम के पट्टाभिषेक के लिए मुहूर्त निश्चित किया। पर क्या हुआ? उसी मुहूर्त में राम वनवास तो गये ही, उनको अपनी पत्नी भी खोनी पड़ी। ये तो यूँही कहते हैं।"

परन्तु राजा की बीमारी न गई। तब मालूम है मन्त्री ने क्या किया? ज्योतिषी को बुलाकर उसने कहा—"तुम ने राजा की आयु तो बताई तुम्हारा अपनी आयु के बारे में क्या कहना है?"

"हुज़ूर! मैं अभी चालीस साल और जीऊँगा।" ज्योतिषी ने कहा।

"हूँ ऐसी बात है?" मन्त्री ने तुरन्त उस ज्योतिषी को मरण दण्ड दिया और उसका सिर कटवा दिया। इससे राजा की बीमारी जाती रही। उसके साथ ज्योतिष की उसकी सनक भी जाती रही। वह सुखपूर्वक राज्य करने लगा।

प्रसिद्ध ऐतिहासिक प्रदेश :

मनेर-गढ़

लेखक : मोतीलाल, अयस्थी घाट, दानापुर, पो. दिघा (पटना)

बिहार की राजधानी पटना से अट्ठारह मील पश्चिम में स्थित 'मनेर' नामक एक प्रसिद्ध ऐतिहासिक ग्राम है, जहाँ इतिहास प्रसिद्ध मनियर राजा का बनाया हुआ किला अब भी सुरक्षित है। लेकिन अब वह किला न कहलाकर गढ़ ही कहा जाता है। गढ़ की बनावट मुसलमानी किले से मिलती-जुलती है! गढ़ का हर भाग पहाड़ी लाल पत्थर से बनाया गया है। गढ़ के तीन तरफ बुर्ज हैं, जहाँ से दुश्मनों की रोकथाम की व्यवस्था की जाती थी तथा एक ओर (दक्षिण) ४८४००० वर्ग गज के घेरे में एक सुन्दर तालाब है, जहाँ राज-कार्यों से अवकाश पाकर राजा आता था और तरह-तरह की मछलियों की जल-क्रीड़ा देखकर मन बहलाता था। यहाँ एक गढ़ के अन्दर तथा एक दूसरा तालाब की कछार पर दो गुफायें हैं।

कहा जाता है कि अन्दर वाली गुफा में तरह-तरह के जंगली हिंस्र पशु रहा करते थे, जहाँ राजा कुछेक सैनिकों के साथ शिकार करने आता था। एक बार जब किसी राजा का लड़का उस ओर शिकार करने गया और कभी भी वापस न लौटा तो राजा ने उस गुफा को बन्द करवा दिया और आज भी वह बन्द ही है।

सन् १९३४ में बिहार में जब भयंकर बाढ़ आयी थी तब ४ मरे हुए भैंस तालाब की कछार वाली गुफा से इस तालाब में आ गये थे। इसलिए अनुमान लगाया जाता है कि गढ़ के पास ही से जो सोन नदी की शाखा गंगा की ओर बहती है, उनके स्रोत इस गुफा से मिले हैं। इसलिए सरकार ने इस गुफा को भी बन्द करवा दिया।

गढ़ के बाहर द्वार से कुछ हट कर पत्थर की एक चिड़िया की मूर्ति है, जो अपने पंजे में हाथी को लेकर उड़ी जा रही है।

कहा जाता है कि सभी पशु-पक्षियों में सबसे बलवान और सब से बड़ा जीव यही चिड़िया था। लेकिन जब कलियुग आने लगा तब वह अपनी जाति के साथ इस लोक से गायब हो गया। क्योंकि वह जानती थी कि कलियुग में सब से छोटा प्राणी होते हुए भी मनुष्य विवेकशील बन सभी जीवों को अपने कब्जे में रखेगा। मुसलमानों ने मनिअर के ऊपर चढ़ाई कर इस गढ़ को अपने कब्जे में कर लिया और बहुत दिनों तक यहाँ राज्य किया।

आज उसी मनिअर राजा के गढ़ के अन्दर (जिसके नाम पर इस ग्राम का नाम पड़ा है।) मखदुम (जो एक फकीर साधु कहे गये हैं।) और उनके चेले तथा चेले की स्त्री का मकबरा बना है।

हमारी अपनी सरकार ने इस गढ़ को अपने अधीन कर लिया है और बाहर से आनेवाले दर्शकों के विश्राम तथा मनोरंजन के लिए एक सुन्दर "निरीक्षण गृह" तालाब के दक्षिण छोर पर बनवा दिया है।

हमारे देश के आश्चर्य:

दिल्ली का लाल किला

हमारे देश के विख्यात भवनों में लाल किले से बढ़कर कोई नहीं है। यह मुगल वैभव का शाश्वत चिन्ह-सा है। विदेशी यात्री इसको देखे बगैरह नहीं जाते हैं।

इसको शाहजहाँ ने बनवाया था। १६३९ में इसका निर्माण प्रारम्भ हुआ। नौ वर्ष बाद शाहजहाँ इसमें रहने लगा। १६४८ में गृहप्रवेश बड़े ऐश्वर्य के साथ किया गया। सब जगह रेशम और मखमल के परदे लगाये गये। दिवाने आम में रखे सिंहासन के सोने के स्तम्भों पर लगे परदों में मोतियाँ भी पिरोई गई। राजाओं और सामन्तों को बहुमूल्य उपहार दिये गये। शाहजहाँ ने जब राजमहल में पैर रखा तो उस पर सोने और चाँदी के सिक्कों की वर्षा की गई। शाहजहाँ ने इस किले में स्वर्गिक भोगों का आनन्द लिया। दिवाने खास पर यह खुदा हुआ है—"यदि भूमि पर कहीं स्वर्ग है, तो वह यहाँ है, यहाँ है" ये बातें उस समय सार्थक थीं।

पर लाल किला मुगलों के लिए शुभदायक नहीं निकला। इसका निर्माता शाहजहाँ

अपने लड़के द्वारा आगरे के किले में कैद कर लिया गया। औरंगजेब दक्खिन में जो युद्ध करने गया, तो वापिस नहीं आया। उसके लड़के शाह आलम बहादुरशाह ने अपनी सारी ज़िन्दगी युद्ध-भूमि के डेरों में काट दी। उसे और कहीं सोना पसन्द न था, इसलिए उसने लाल किले में पैर नहीं रखा। उसके बाद तो मुगलों का तो वैभव ही जाता रहा।

लाल किले में जगह-जगह बाग थे। नहरें थीं। लाल किले के दो द्वार हैं, यात्री पश्चिमी द्वार से अन्दर जाते हैं। इसका नाम लाहौर द्वार है। यह चान्दनी चौक के सामने हैं। असली राजमहल के मुख्य द्वार पर नकारखाना है, जो लाल पत्थर का बना है। इसके सामने लान है। उसके बाद दिवाने आम है। मामूली जनता लान पर बैठती थी, कभी-कभी यहाँ परदे भी लगाये जाते थे। बड़े-बड़े लोग ही दरबार में जा पाते थे। दरबार भवन के पूर्वी भाग में एक ऊँची वेदिका थी, उस पर सिंहासन होता था। सिंहासन के सामने वज़ीर का संगमरमर का आसन था। दीवाने आम के पास की इमारत को रंगमहल कहा जाता था। यहाँ शायद बादशाह के घर की स्त्रियाँ बैठा करती होंगी। इस इमारत के बीच में एक

संगमरमर का कुन्ड-सा है। इसका निचला भाग कमल-सा बनाया गया है। राजमहल में जो नहर जाती थी, वह इस कुन्ड में से होकर जाती थी। इसको "नहरी-बहिश्त" (स्वर्ग कुल्या) कहा जाता था।

रंगमहल के दक्षिण में एक और इमारत है, जिसको मुमताज़ महल, नहीं तो शीश महल कहा जाता था। अब यहीं एक म्यूजियम है। इसमें मुगल जमाने की बहुत-सी चीज़ें रखी गई हैं। यह देखने लायक है। रंगमहल के उत्तर में महले खास है। यह बादशाह का अपना घर था। इसमें तीन भाग हैं, एक वह भाग, जहाँ शाहजहाँ काम किया करता था, दूसरा वह जहाँ वह सोया करता था, तीसरा वह जहाँ वह नमाज़ पढ़ा करता था। आज भी ये बहुत मनोहर मालूम होते हैं।

खास महल से सटकर एक अठकोना बुर्ज़ है। बादशाह इस बुर्ज़ से बाहर खड़ी जनता को दर्शन दिया करता था। बादशाह और उसके लड़के यहाँ से मैदान

पर होनेवाली हाथियों की लड़ाई व अन्य प्रतियोगितायें देखा करते थे।

और उत्तर में दिवाने खास है। बादशाह अपने वज़ीरों और मुलाजिमों से यहाँ सलाह मशवरा किया करता। जगत्प्रसिद्ध हीरे मोती खचित मयूर सिंहासन यहीं था। दीवाने खास के उत्तर में बादशाह के कुटुम्ब के लिए स्नानशालायें थीं। हमारे देश में कहीं और इतने सुन्दर मुगल स्नानशालायें नहीं हैं। यहाँ संगमरमर पर की गई कारीगरी बहुत मनोहर है। लाल किले में सब भवनों में, ये स्नानशालायें ही पहिले जमाने में जैसी थीं, वैसे आज भी सुरक्षित हैं। स्नानशाला के पास ही मोती मस्जिद है। इसको औरन्गजेब ने अपनी स्त्रियों के लिए बनवाया था। यह संगमरमर का बनी है। मोती मस्जिद के परे एक बाग है, उसके दोनों ओर संगमरमर के मण्डप हैं। इन मण्डपों में एक का नाम श्रावण है, दूसरे का भाद्रपद। बाग के बीचोंबीच दूसरे बहादुरशाह ने पिछली सदी में लाल पत्थर की एक इमारत बनवाई।

राजमहल के उत्तर में शाक बुर्ज नाम का एक सुन्दर बुर्ज है। लाल किले को साफ़ रखने के लिए बहुत से नौकर होते थे। इन्हें "फर्राश" कहा जाता था। इनके नाम पर अब भी दिल्ली में एक मोहल्ला है, जिसे फर्राश खाना कहा जाता है।
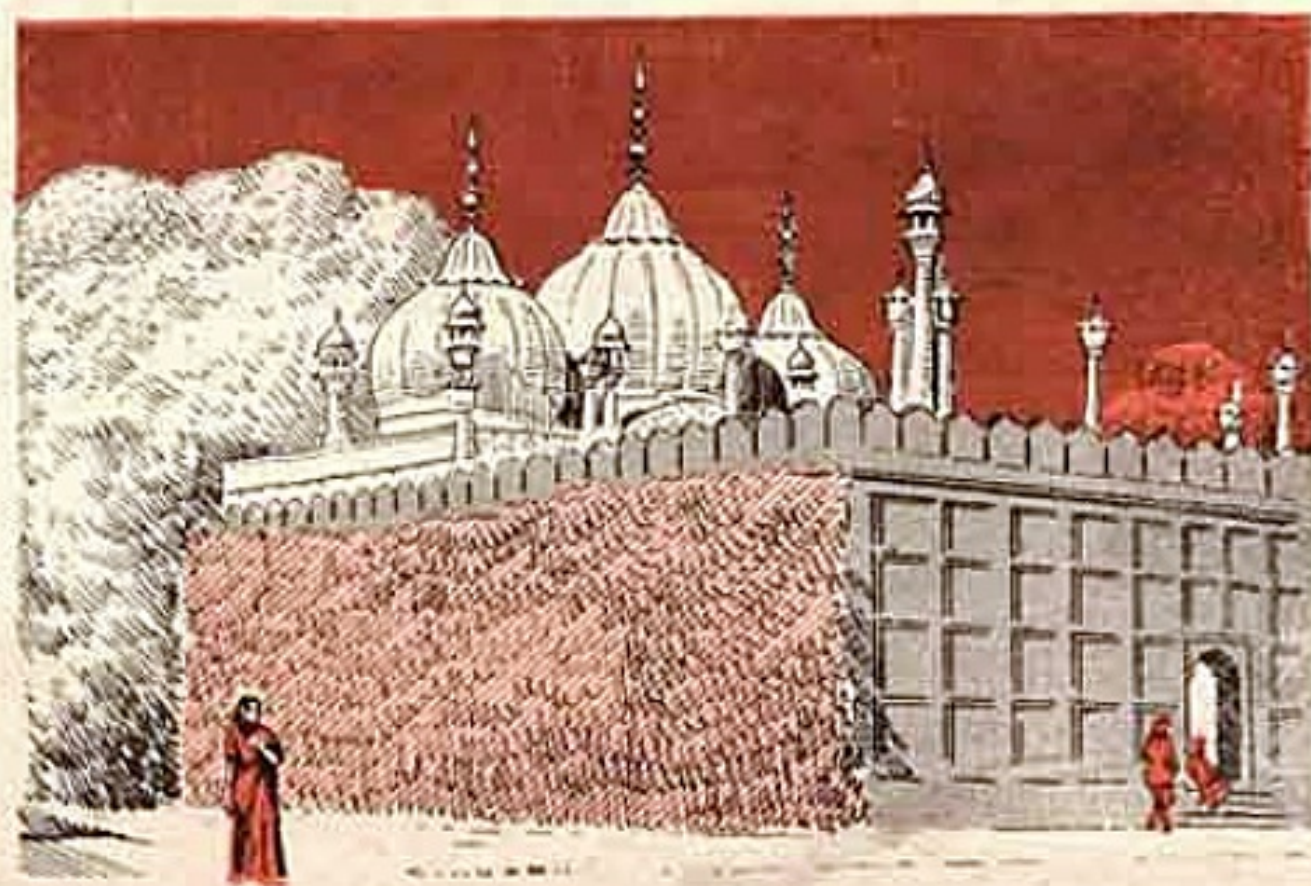
फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

मार्च १९६१ :: पारितोषिक १०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें।

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए। परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिख कर निम्नलिखित पते पर ता. ७, जनवरी '६१ के अन्दर भेजनी चाहिए।

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता,
चन्दामामा प्रकाशन,
वडपलनी, मद्रास - २६.

जनवरी – प्रतियोगिता – फल

जनवरी के फ़ोटो के लिए निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं।
इनके प्रेषक को १० रु. का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो : **क्या पढ़ूं? पढ़ा न जाए!**

दूसरा फ़ोटो : **क्या लिखूं? लिखा न जाए!!**

प्रेषक : **श्री विजयकुमार,**
विजय वॉच कंपनी, अपर बाज़ार, राँची (बिहार)

१. गोपाल प्रसाद, साधोपुर चेंगमारी

क्या आप चन्दामामा के वार्षिक मूल्य में कुछ रियायत नहीं कर सकते हैं?

फिलहाल तो यह सम्भव नहीं है, फिर मूल्य कुछ अधिक भी तो नहीं है।

चन्दामामा केवल हिन्दी में ही छपता है, अथवा अन्य भाषाओं में भी?

हिन्दी के अलावा, चन्दामामा तेलुगु, तमिल, कन्नड, मराठी और गुजराती में भी प्रकाशित होता है।

२. सुरेशकुमार जयपुरिया, कलकत्ता

आप क्यों नहीं कुछ पाठकों के पते देते, जिनसे कि आपके अन्य पाठक मैत्री कर सकें?

सुझाव अच्छा है। पर चन्दामामा का कलेवर बढ़ेगा, तो आपका सुझाव को कार्यान्वित करने का प्रयत्न करेंगे।

३. टी. चन्द्रप्रकाश बाहरी, अमृतसर

क्या आप 'स्वतन्त्रता प्रेमियों' की कहानियाँ छापेंगे?

परामर्श अच्छा है, कुछ तो हम ऐसी कहानियाँ दे चुके हैं और भी देंगे।

चन्दामामा मास में दो बार क्यों नहीं प्रकाशित करते?

यदि आप लोगों की सद्भावना बनी रही, तो कभी यह सम्भव हो ही सकेगा।

४. गुरुबीतसिंह मेहता, नई दिल्ली

मैं "चन्दामामा" का ग्राहक बनना चाहता हूँ। क्या करना होगा?

व्यवस्थापक के नाम पूरा पता देते हुए, चन्दा भेजना होगा।

५. महेशप्रसाद, बलरामपुर

क्या "चन्दामामा" का प्रचार विदेशों में भी है, यदि है तो किस दाम पर?

है, और प्रचार निरन्तर बढ़ता ही जा रहा है।

६. वेडल सूर्यनारायण, आहिटघोट

श्री नागिरेड्डी, श्री चक्रपाणी का चन्दामामा से क्या सम्बन्ध है।

वे इसके संचालक हैं।

७. नन्दकिशोर चौधरी, बेतूल

क्या जो प्रश्न हम पूछते हैं, उन सबका उत्तर दिया जाता है?

प्रश्न बहुत आते हैं, सब का उत्तर सम्भव नहीं है। हम चुने हुए प्रश्नों का ही उत्तर देते हैं।

क्या पूछे गये प्रश्नों में उत्तम प्रश्नों पर पारितोषिक भी दिया जाता है?

अभी तो हमने ऐसा कम नहीं बनाया है।

८. अमरनाथ चावल, हावड़ा

आप क्या एक ही प्रश्न का उत्तर देते हैं?

आपने देखा ही होगा कि हम एक व्यक्ति के एक से अधिक प्रश्नों का उत्तर भी देते हैं। बात प्रश्नों की है, व्यक्ति की नहीं।

९. चितीशकुमार मिश्र, हाज़ारी बाग

क्या आप अपने वार्षिक ग्राहकों के ही प्रश्न अपने पत्र में छापते हैं?

प्रश्न करने के लिए ग्राहक होना आवश्यक नहीं है।

१०. एम. अनवर, बरहानपुर

क्या ही अच्छा हो अगर आप "चन्दामामा" उर्दू में भी प्रकाशित करें?

काश, हम कर पाते।

चित्र-कथा

एक दिन दास और वास बाग में खेल रहे थे कि एक गड़रिये और एक शरारती लड़के ने "टाइगर" को पकड़ने की सोची। गड़रिया, फन्देवाली रस्सी लेकर पेड़ के पीछे छुप गया और शरारती लड़का "टाइगर" को उस तरफ़ भगाने लगा। जब "टाइगर" पेड़ के पास आया, तो गड़रिये ने रस्सी फेंकी, रस्सी "टाइगर" के सिर पर न पड़कर, शरारती लड़के के पैर पर पड़ी। वह गिर गया और इस बीच "टाइगर" भाग गया। दास और वास हँसते-हँसते लोटपोट हो गये।

Printed by B. NAGI REDDI at the B. N. K. Press Private Ltd., and Published by B. VENUGOPAL REDDI for Sarada Binding Works, 2 & 3, Arcot Road, Madras-26. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI'

सुगंध
फैलता है
रेमी
स्नो और
पाउडर
Remy
Remy
Aykan